सदैव सम और प्रसन्न रहना ईश्वर की सर्वोपरि भक्ति है ।
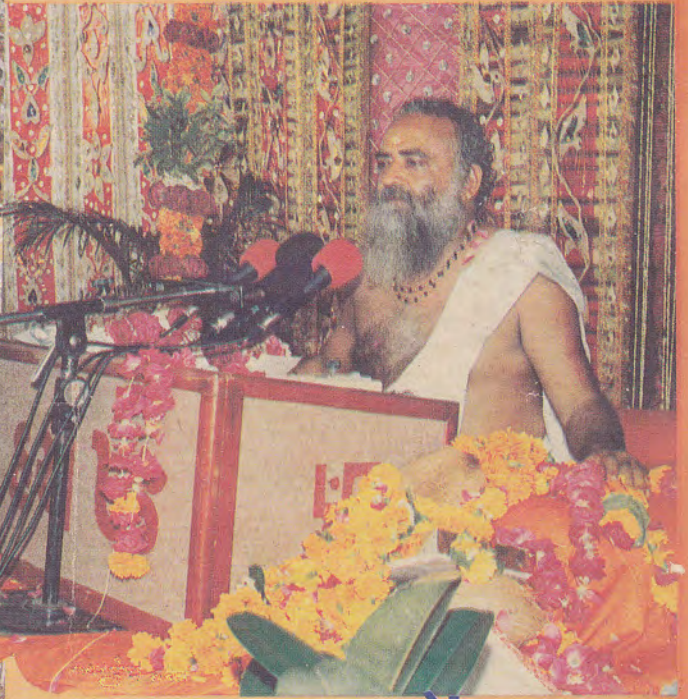
आगरा में उमड़ा आनन्दसागर

आगरा की धर्मप्रेमी जनता ने आनन्ददाता अलख के ओलिया पुरुष का बहुत बहुत लाभ लिया।

वर्ष : ४ नवम्बर-दिसम्बर १९९३ अंक : २१

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

शब्द-सुमन

पूजनीय संत श्री आसारामजी बापू के पावन चरणों में सादर समर्पित...

पूत भाव से प्रेरित हो, जो कर रहे मानवता का कल्याण हैं।
जन्म मरण के दुष्चक्र से, मुक्ति दिलाने का, जो कर रहे सदा विधान हैं।
नीर क्षीर विवेक रख, कराते जो, परम ध्रुव सत्य का परिज्ञान हैं।
यज्ञ तत्त्व ज्ञान का चलानेवाले, ये परोपकारिता और सुहृदयता की खान हैं।
संस्कारों का सिंचन कर, जो कर रहे, चारित्रिक, सांस्कृतिक उत्थान हैं।
तरल-सरल, परम कृपालु, संयमशील, धीर, तेजस्वी, सुज्ञ गतिमान हैं।
श्री-समृद्धि का सुयोग्यतम उपयोग करनेवाले, ये उदारचेता महिमावान हैं।
आज की विकृत मानसिकता को सुधारनेवाले ये ज्ञान भानु समान हैं।
सारग्रही, स्वस्थ, प्रसन्नवदन, सत्यशोधक, सहजभाव से करा रहे जो स्वरूपज्ञान हैं।
राग-द्वेष मिटा प्रेम-मंदाकिनी बहानेवाले, ये दृढ़प्रतिज्ञ, निर्भीकमना, अति ही प्रज्ञावान हैं।
ममता-मोह से त्राण दिलानेवाले, साक्षात्कारी परम विज्ञ, संत सुजान हैं।
जीव को शिव बनानेवाले, ये परम तेजस्वी, तपोनिष्ठ, ज्ञान-निधान हैं।
बाहोश बनाते बेहोशों को, लखा देते अलख को, करा ज्ञान-गिरा का पान हैं।
पूरित अन्तर्घट में, अखिलेश्वर की शक्ति का, सहज करा देते, जो पहचान हैं।

ऐसे ज्ञानपुंज महामहिम को, कोटि-कोटि मेरा वन्दन है।
शब्द-सुमन समर्पित कर, यह अज्ञ कर रहा 'मधुर' अभिनन्दन है।

- रमाशंकर शर्मा 'मधुर'
मधुर विला, मथुर शेठ की गली, गोधरा रोड़,
दाहोद-३८९ १६०. पंचमहाल, गुजरात.

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

वर्ष : ४
अंक : २१
नवम्बर-दिसम्बर १९९३
तंत्री : के. आर. पटेल

शुल्क वार्षिक : रू. २५/-
आजीवन : रू. २५०/-
परदेश में वार्षिक : US$ १५ (डॉलर)
आजीवन : US$ १५० (डॉलर)

कार्यालय :
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अहमदाबाद-३८० ००५.
फोन : ४८६३१०, ४८६७०२

परदेश में शुल्क भरने का पता :
International Yoga Vedanta Seva Samiti
8 Williams Crest,
Park Ridge, N. J. 07656 U.S.A.
Phone (201) - 930 - 9195

टाईपसेटींग : पूजा लेसर पॉईन्ट

प्रकाशक और मुद्रक : श्री के. आर. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती,
अहमदाबाद-३८० ००५ ने
अंकुर ऑफसेट, गोमतीपुर, अहमदाबाद में
छपाकर प्रकाशित किया।

Subject to Ahmedabad Jurisdiction.

अनुक्रम

'ऋषि प्रसाद' हर दो महीने में ९ वीं तारीख को प्रकाशित होता है।

कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

संपादकीय

पू. बापू का स्नेहसिक्त सन्देश

आत्मकृपा, गुरुकृपा, शास्त्रकृपा और ईश्वरकृपा प्राप्त किये हुए साधकगण का यह अनुभव है कि :

सभी इन्द्रियों में हुई रोशनी है ।
यथा वस्तु है सो तथा भासती है ॥
विकारी जगत ब्रह्म है निर्विकारी ।
मनी आज अच्छी दिवाली हमारी ॥

नूतन-वर्षाभिनन्दन के साथ साथ आप सबका ऐहिक मंगल हो, सुख-समृद्धि, धन-धान्य के साथ आध्यात्मिक मंगल हो । संयम-सदाचार से इन्द्रियाँ तेजस्वी हों, एकाग्रता से मन की प्रसन्नता, आत्मीयता से समता का साम्राज्य प्राप्त हो ।

अपने दिव्य लक्ष्य को, शुभ संकल्पों को, सुबह, दोपहर, शाम दुहराओ । जैसे तुम बनना चाहो... ना, ना, जैसे तुम वास्तव स्वरूप में हो, सभी इन्द्रियों को प्रकाशने वाले, मन-बुद्धि के साक्षी चैतन्य, आनन्द स्वरूप... उस अपने आत्मस्वरूप में, सद्-गुरु प्रसाद में गोता मारने का दृढ़ अभ्यास करो । दृढ़ अभ्यास से अपना आत्मराज्य पाओ । हे अमर आत्मा ! दुःखों, क्लेशों, तनावों से अभी अभी यहीं यहीं सदा के लिए मुक्त हो जाओ ।

'सदा दिवाली संत की' ऐसी दिवाली में प्रवेश पाओ ।

सदा दिवाली संत की आठों प्रहर आनन्द ।
अकल मता को उपजै गिने इन्द्र को रंक ॥

क्यों... ठीक है न ! कमर कसो । सजगता से साधना में लग जाओ । शाबाश वीर ! शाबाश ! धन्य धन्य तुम्हारी दिवाली हो । धन्य धन्य तुम्हारा जीवन हो ।

❀

हरि ॐ हरदम उच्चारे चला जा...

हरि ॐ हरदम उच्चारे चला जा ।
दयामय गुरु के सहारे चला जा ॥
हरि ॐ हरदम उच्चारे चला जा...

ये भक्ति प्रभु की महा सुख दाता ।
तू मानव जन्म को सँवारे चला जा ॥
हरि ॐ हरदम उच्चारे चला जा...

रंजो फिकर में न परेशान होना ।
वक्त जैसा आये गुजारे चला जा ॥
हरि ॐ हरदम उच्चारे चला जा...

ये दुनिया नदी लोभ मोह बहती जाये ।
तू इसके किनारे-किनारे चला जा ॥
हरि ॐ हरदम उच्चारे चला जा...

हरि ॐ, मौला सभी नाम उसके ।
शिवोहम् सुंदरम् उच्चारे चला जा ॥
हरि ॐ हरदम उच्चारे चला जा...

तुझे अपनी मुक्ति का रास्ता मिलेगा ।
तू अपने गुरु के द्वारे चला जा ॥
हरि ॐ हरदम उच्चारे चला जा...

वर्ल्ड रीलिजीयस पार्लामैन्ट में पूज्यपाद गुरुदेव के प्रवचन में से पुष्पचयन

(दिनांक : ४-९-९३)

मानव जितना ऊँचा उठ सकता है उतना ऊँचा उठा हुआ, जो स्वर्ग से दिव्य अस्त्र लाया था, स्वर्ग के प्रलोभनों को ठोकर मारने की ताकत रखता था ऐसा अर्जुन जब किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो रहा है ऐसे वक्त गीता गूँजी है । महापुरुष के चले जाने के बाद नहीं परन्तु श्रीकृष्ण के जीते जी उनके श्रीमुख से गीता निकली है ।

भारत की योगविद्या, भारत का कर्मकांड, भारत का तत्त्वज्ञान और भारत का सामाजिक जीवन अनुपम है । आज पूरे विश्व को शांति, आनन्द और आत्मिक मस्ती की जरूरत है । भारत ने कभी यह नहीं सोचा कि **'हिन्दु भवन्ति सुखिनः ।'** वेद कहते हैं : **'सर्वे भवन्तु सुखिनः । वसुधैव कुटुम्बकम् ।'**

हम अमेरिका को पराया नहीं मानते । भारत को तो हम जन्मभूमि मानते हैं परन्तु अमेरिका की या विश्व की कोई भी भूमि है वह हमारे एक परमात्मा की ही मानते हैं । इसलिए हमारी दृष्टि **'एक में सब और सब में एक'** की दृष्टि रहती है ।

वेदान्त रूपी शेर की गर्जना से अपने आत्मज्ञान की खबर मिलती है और आप भी अपनी सारी चिंता और तनावों से हँसते हँसते मुक्त हो सकते हैं । यह भारत का तत्त्वज्ञान है ।

संकीर्णता अंतःकरण की नीची स्थिति है । 'हम ईसाई हैं.. हम हिन्दू हैं.. हम मुसलमान हैं...' यह सब संकीर्णता है । जब हम गहराई में जाते हैं तो पता चलता है कि सबका आधार एक है और सबका लक्ष्य भी एक है ।

हम अमेरिका को पराया नहीं मानते । भारत को तो हम जन्मभूमि मानते हैं परन्तु अमेरिका की या विश्व की कोई भी भूमि है वह हमारे एक परमात्मा की ही मानते हैं ।

सबकी उन्नति, सबकी प्रसन्नता, सबका आनन्द, सबका कल्याण मेरा कल्याण है क्योंकि सब भिन्न भिन्न दिखते हैं परन्तु वास्तव में सब एक हैं । मेरे शरीर में जैसे अंग भिन्न भिन्न हैं, परन्तु मैं एक हूँ । ऐसे ही विश्व में अनेकता के पीछे भी एक सत्य और एक ही सनातन रहस्य है । योगशक्ति आम आदमी को मिले इसलिए व्यावहारिक लोगों को धर्म की तरफ आकर्षित करने के लिए कभी कभी देवताओं ने योगशक्ति का चमत्कार दिखाया । अभी सर्जरी ने जैसी प्रगति की है उससे कइ गुना प्रगति युगों पहले हो चुकी है । शिवजी के पुत्र गणपति पर हाथी का मस्तक रख कर समाज को यह बताया है कि संकल्पबल से यह भी हो सकता है ।

मनुष्य विषय-विलास, शराब-कबाब और डिस्को करके पिशाची जीवन जीकर मरने को नहीं आया है । आत्महत्या करना भोगी और कायर मन की पहचान है । सत्कर्म, सद्गुरुओं का सान्निध्य और आत्म-साक्षात्कार करके मुक्त होना यह साधक, भक्त और योगीमन की पहचान है ।

युद्ध के मैदान में श्रीकृष्ण ने कहा है :

'तस्मात् योगी भवार्जुन ।'

तो यह पामर हाऊस के वर्ल्ड रिलीजीयस पार्लामैन्ट में मैं भी कहता हूँ कि **'तस्मात् योगी भव श्रोता ।'** हे मनुष्य ! तू मरने के लिए नहीं, अमर होने के लिए आया है । उस लक्ष्य की जागृति हो जाए ।

खुदी को कर बुलन्द इतना
कि हर तकदीर के पहले
खुदा बँदे से पूछे कि
तेरी रजा क्या है?

तू आत्मा परमात्मा का सनातन अंश है । तेरे अन्दर चैतन्य शक्ति है । उस चेतना को जगाने के लिए उसकी अलग उपासनाएँ हैं । हमारा मन बहुआयामी है । रोटी

सब्जी खाकर शरीर जी सकता है। परन्तु हमें विभिन्न व्यंजन चाहिए। मनुष्य एक ही किस्म के कपड़े पहनकर रह सकता है परन्तु फिर भी विभिन्नता चाहिए। एक ही प्रकार की कार सबको चल सकती है परन्तु उसमें भी रंग एवं डिजाईन की विभिन्नता चाहिए। हमारा मन बहुआयामी है। भारत ने बहुआयामी मन के लिए बहु-आयामी साधनाएँ भी खोज रखी हैं। इस कारण भारत में बहुत सारे भक्त पैदा हुए। बहुत सारे सफल योगी पैदा हुए। बहुत सारे समर्थ पुरुष पैदा हुए। बहुत सारे अवतार पैदा हुए क्योंकि बहुत सारी साधनाओं की व्यवस्था है।

सबकी उन्नति, सबकी प्रसन्नता, सबका आनन्द, सबका कल्याण मेरा कल्याण है क्योंकि सब भिन्न भिन्न दिखते हैं परन्तु वास्तव में सब एक हैं।

अभी भी भारत में ऐसी योग-साधना पद्धति है कि आप भी उसका अनुभव कर सकते हैं। सिर्फ चार दिन के अंदर दो घंटे सुबह और दो घंटे शाम अगर आप कुछ यौगिक प्रयोग करो तो तुम्हारे स्वास्थ्य में बदलाहट महसूस होगी। तुम अपने मन को बदला हुआ पाओगे। तुम्हारी बुद्धि में प्रसन्नता का अनुभव होगा। चार दिन के अंदर ही सिर्फ सोलह घंटों में तुम अनुभव करके अपने को धन्य कर सकते हो ऐसी कला भारत में अभी भी है।

आज के वक्ताओं को, चाहे वे राज-नैतिक हों या आध्यात्मिक हों, सबको मैं हाथ जोड़कर प्रार्थना करता हूँ कि वे समाज में विद्रोह बढ़ाने वाले भाषण न करें, प्रेम बढ़ाने का प्रयास करें। विश्व को विद्रोह की जरूरत नहीं है। किसी भारतवासी की छोटी-मोटी बात लेकर भारत के धर्म की निन्दा करके मानव जाति को सत्य से दूर करने की कुचेष्टा न करें। अशांति और आत्महत्या जैसी घटनाएँ तो भारत की अपेक्षा धनवान देशों में ज्यादा मिलेंगी।

साधना में लगे रहो

सिद्धार्थ साधना में निराश होकर बैठे थे। सोच रहे थे कि घर वापस लौट जाऊँ। इतने में देखते हैं कि सामनेवाले पेड़ पर एक कीड़ा चढ़ रहा है। हवा का झोंका आया और गिर पड़ा। फिर से चढ़ना शुरू किया। कुछ ऊपर गया और फिर हवा से गिर पड़ा। इस प्रकार सात बार चढ़ा और सात बार गिरा। फिर भी प्रयास छोड़ा नहीं। आठवीं बार चढ़ना शुरू किया और वह सफल हो गया।

सिद्धार्थ ने सोचा : 'एक साधारण कीड़ा बार-बार गिर पड़ने के बाद भी अपना पुरुषार्थ जारी रखता है, सफल हो जाता है, तो मैं तो मनुष्य हूँ। मैं क्यों पीछे हटूँ ?'

सिद्धार्थ ने पक्का निश्चय कर लिया : ''कार्यं साधयामि वा देहं पातयामि। कार्य सिद्ध करूँगा अथवा मर जाऊँगा। महल में भी एक दिन तो मरना ही है। साधना करते करते अगर मर भी गया तो क्या होगा ?''

सिद्धार्थ ने पक्की गाँठ बाँध ली, साधना में जुट गये और सात साल के अन्दर ही परम शान्ति को उपलब्ध होकर भगवान बुद्ध बन गये। अतः तुम भी परमपद पानेका पुरुषार्थ करो, देर सबेर सफलता तुम्हारे चरण चूमेगी।

टोरेन्टो-केनेड़ा रेडियो स्टेशन से प्रसारित पूज्यश्री बापू के प्रवचन में से आचमन

प्रश्नकर्त्ता :''पाश्चात्य जगत में यहाँ किसीको अपनी नौकरी का डर है, किसीको अपनी पत्नी का डर है, किसीको अपने पति का डर है, किसीको अपने बच्चे नालायक होने का डर है, किसीको धन छिन जाने का डर है, किसीको व्यापार में घाटे का डर है, किसीको हार्टएटैक का डर है, किसीको कैन्सर का डर है । लोग बड़े भयभीत होकर जीवन व्यतीत कर रहे हैं । कृपया हमें उनसे मुक्त होने का तरीका, निर्भय होने की युक्ति बताइये ।''

आत्म-उद्धारक सामाजिक संत पू. बापू ने कहा :

''भय, चिंता और अप्रसन्नता ये तीन चीजें आज चारों तरफ व्याप रही हैं । जीवन में निश्चिंतता, निर्भयता और प्रसन्नता इन तीनों चीजों की बहुत आवश्यकता है । जितने अंश में ये तीन चीजें अधिक होगी उतना ही जीवन बढ़िया होगा, बुलंद होगा, आध्यात्मिक होगा, स्वर्गीय होगा । ये चीजें जितनी कम होगी उतना ही जीवन लाचार होगा । अगर ये तीन चीजें नहीं हैं तो मनुष्य जीवन पशु से भी बदतर होगा । पशु को तो बेटे-बेटियों की शादी की चिंता नहीं रहती । मनुष्य को चिंता घुन की नांई लगी है । चिंता चिता से भी बुरी है । चिता एक बार ही जलाती है जबकि चिंता बार-बार जलाती है ।

निश्चिंत, निर्भय और प्रसन्न रहने के लिए गीता के गायक श्रीकृष्ण उपनिषद् का अमृत बरसाते हुए कहते हैं : **अभयं सत्त्वसंशुद्धिः ।**

तुम्हारे जीवन में निर्भयता लाओ । सिक्ख धर्म के आदिगुरु नानकजी ने कहा है :

निर्भय जपे सकल भव मिटे ।
संत कृपा ते प्राणी छूटे ॥

व्यवहार में भी जो आदमी जरा-जरा में डरता है, वह बड़ा काम नहीं कर सकता । ड्रायवींग करते समय निर्णय लेने के समय जब डरते हैं तब गलत निर्णय होता है और दुर्घटना घटती है ।

मुस्कुराना मेरी आदत है, प्रसन्न रहना मेरा स्वभाव है और लोगों में जागृति लाना मेरा उद्देश्य है ।

आत्मा पर निर्भर होने वालों में निश्‍चितता, निर्भयता और प्रसन्नता स्वाभाविक आयेगी ।

जीवन में अगर डर, दुःख और विघ्न-बाधाओं के समय हम तटस्थ होकर, निर्भय होकर, विचारते हैं तो हम उनके सिर पर पैर रखकर सफल हो जाते हैं । निर्भय तत्त्व का स्मरण करना चाहिए । देह को मैं मानोगे तो भय बना ही रहेगा । देह पाँच भूतों की है, वह बदलती रहती है । हो-हो कर क्या होगा ? रोटी तो भगवान को भी देनी है और लेकर कोई गया नहीं, सब यहाँ छोड़कर चले गये । फिर चिंता और भय किस बात का ? दूसरे का बड़ा घर, बड़ी गाड़ी देखकर आदमी ईर्ष्या में जलता है, परन्तु दूसरे की गहराई में मेरा ही स्वरूप है ऐसा चिन्तन करते हुए मजा लूटे तो आनन्द ही आनन्द है ।

चिंता चिता से भी बुरी है । चिता एक बार ही जलाती है, चिंता बार-बार जलाती है ।

जीवन में निश्चिंतता चाहिए । निश्चिंतता ईश्वर पर विश्वास रखने से आती है । अपनी आत्मा पर विश्वास रखें । देह पर विश्वास रखेंगे तो भय, चिंता और परेशानी अवश्य आयेगी । आत्मा पर निर्भर होने वालों में निश्चिंतता, निर्भयता और प्रसन्नता स्वाभाविक आयेगी । ईश्वर पर भरोसा रखने से आदमी में निश्चिंतता आती है । आत्मा पर भरोसा रखने से, 'मैं अजर-

विश्वधर्मसंसद का संदर्भ देते हुए पूज्यश्री ने कहा :

''भारतीय संस्कृति **'परस्पर देवो भव'** की भावना से पल्लवित संस्कृति है। **'वसुधैव कुटुम्बकम्'** की भावना भारतियों का प्राण है। भारत के नागरिक विश्व के सभी देशों में फैले हुए हैं। दुनिया के अन्य देशों के वासी भारत में आकर, भारत का अन्न खाकर भारत से गद्दारी करते हैं। बम-धड़ाका करते हैं, निर्दोष निरपराधों के जीवन को तहसनहस करते हैं। परंतु भारत के भगवान राम, कृष्ण, शिव, गणपति, गीता, रामायण, भागवत को माननेवाले किसी व्यक्ति ने दुनिया के किसी भी देश में आजतक गद्दारी नहीं की। यह भारतियों की वफादारी है। जिस देश का अन्न वे खाते हैं उसका मंगल चाहते हैं।''

अमेरिका में बड़ी बड़ी गाड़ियाँ, चौड़ी सडकें, बड़े बड़े मकान आदि हैं परंतु अंदर हृदय में परमात्मा का आनंद नहीं है, अंदर ठनठनपाल है।

वाह-वाह की आवाजों एवं तालियों के ध्वनि के बीच अपना मंगल प्रवचन आगे बढ़ाते हुए कुंडलिनी योग के अनुभवनिष्ठ ज्ञाता, शक्तिपात दीक्षा के समर्थ सद्गुरु पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू ने कहा :

''अमेरिका की खोज नहीं हुई थी उसके पाँच हजार वर्ष पहले भारत का वीर अर्जुन सशरीर स्वर्ग में गया था। वहाँ से दिव्य अस्त्र शस्त्र ले आया था। वह वहाँ के लुभावने आकर्षण, अप्सरा आदि से प्रलोभित नहीं हुआ था। ऐसा संयम भी था। ऐसी निष्ठा, संयम, वीरता भारतियों के जीवन में थी और अभी भी है।

श्रीमद् भगवद्गीता किसी व्यक्ति या मिशन ने नहीं बनायी। गीता गंगा से भी उत्तम है। गंगा भगवान के चरणकमलों से निकली है, जबकि गीता भगवान के श्रीमुख से निकली है।''

आज पूज्यश्री ने गीता के दसवें अध्याय के दसवें श्लोक पर अपना मार्मिक प्रवचन दिया। पूज्यश्री ने कहा :

''जो सतत परमात्मा में अनन्य भाव से लगे हैं उन्हें परमात्मा बुद्धियोग देते हैं, जिससे परमात्मा की मुलाकात हो जाती है। गीता में 'योग' शब्द चौसठ बार आया है। बुद्धियोग विशेषयोग है।''

पूज्यश्री स्वामीजी ने प्रवचन की समाप्ति में 'मधुर मधुर नाम... हरि हरि ॐ...' का पावनकारी पापनाशक संकीर्तन कराया जिसमें उपस्थित श्रोतागण एवं संत-साधु-मंडल भी भावविभोर हो गया था। संगीत की धून पर लोग हरिनाम की मस्ती में नृत्य करते हुए झूम उठे थे। ऐसा लगता था जैसे गोप-गोपियों का प्रेम, चैतन्य महाप्रभु की अनोखी मस्ती, शबरी का समर्पण, मीरा की प्रेमविह्वलता पांडाल में उमड़ रही थी। वृंदावन में राधा-माधव के प्रेम का एक चश्मा मानो बह चला था। पूज्यश्री का सत्संग कीर्तन हिन्दू शताब्दी महोत्सव का एक नजराना सिद्ध हो चुका था।

पूज्यश्री दिनांक २३ को संत-संमेलन की समाप्ति करके आगरा में आयोजित छः दिवसीय सत्संग समारोह के लिए बिदा हुए।

सदस्यों के लिए आवश्यक सूचना

(१) सदस्यता का नवीनीकरण करते समय म.ओ. फार्म में, संदेशस्थान पर अपना पूरा पता, पिनकोड नंबर, ग्राहक नंबर एवं कब से सदस्यता का नवीनीकरण करना है, इसका उल्लेख अवश्य करें।

(२) उ.प्र., राजस्थान, म.प्र., गुजरात एवं महाराष्ट्र में सेवाधारी के रूप में सेवा करने के इच्छुक साधक 'ऋषि प्रसाद' कार्यालय का सम्पर्क करें। पत्र व्यवहार करते समय किस क्षेत्र में वे 'ऋषि प्रसाद' के वितरण का कार्य करना चाहते हैं यह अवश्य लिखें।

(३) कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना नाम व पूरा पता एवं ग्राहक नंबर अवश्य लिखें।

(४) 'ऋषि प्रसाद' का सदस्य शुल्क केश, डिमाण्ड ड्राफ्ट अथवा म.ओ. के रूप में ही स्वीकार किया जाता है। चेक स्वीकार नहीं किये जाते।

वृंदावन में संत-संमेलन में पूज्यश्री का दिव्य उद्‌बोधन

दिनांक : २३-९-१९९३

विश्व के विकासशील देशों के प्रवास एवं शिकागो में आयोजित विश्वधर्मसंसद में अपने तेजस्वी, ओजस्वी, प्रभावशाली प्रवचन से भारतीय संस्कृति की गरिमा को गौरवमय बनानेवाले विश्वसंत पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू ने भारत लौटने पर अपना पहला प्रवचन हिन्दू शताब्दी महोत्सव पर आयोजित संत-संमेलन, वृंदावन में दिया । दिनांक २२ सितम्बर की शाम को पूज्यश्री का प्रवचन था । वह इतना प्रभावी, भाववाही एवं गौरवान्वित था कि भक्तों एवं आयोजकों की अनुनय विनयभरी विनंति से बढ़ाया गया एवं दिनांक २३ सितम्बर को भी पूज्यश्री ने प्रवचन दिया ।

पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू ने देश के विभिन्न इलाकों से आये हुए सौ से अधिक महंत-मंडलेश्वरों, वृंदावन एवं अन्य तीर्थों से आये हुए सैंकड़ों साधु-संतों एवं हजारों श्रद्धालुओं से खचाखच भरे पांडाल में अपनी मनमोहिनी छटा में सर्वप्रथम कहा :

दिलरूबा दिल की सुनाऊँ,
सुननेवाला कौन है ?
कन्हैया का रस भर भर पिलाऊँ,
पीनेवाला कौन है ?

उपस्थित जनसमुदाय ने तालियों के आवाज से पूज्यश्री को बधाइयाँ प्रदान कीं । पूज्यश्री बापू ने आगे कहा :

''भगवान श्रीकृष्ण ने सत्रह साल की उम्र तक शस्त्र नहीं उठाया फिर भी कई दुष्टों को स्वधाम पहुँचाया । श्रीकृष्ण कभी रोये नहीं । हँसते खेलते जीवन की नैया को सुःख-दुःख में से खेते हुए पार हो गये । युद्ध के मैदान जैसी परिस्थिति में भी उन्होंने जो गीत गाया, उस गीत से अर्थात् गीता से अर्जुन का शोक-मोह उतर गया । अभी भी गीता को पढ़नेवाले व्यक्ति का हृदय श्रद्धा-भक्ति से भर जाता है । हताश, निराश, बेबस को जीवन जीने की सही दिशा मिल जाती है । परमात्मा की मधुर स्मृति में वह तल्लीन हो जाता है ।''

अमेरिका की यात्रा के अनुभव को याद करते हुए पूज्यश्री ने कहा :

''अमेरिका में बड़ी बड़ी गाड़ियाँ, चौड़ी सड़कें, बड़े बड़े मकान आदि हैं परंतु अंदर हृदय में परमात्मा का आनंद नहीं है, अंदर ठनठनपाल हैं जबकि भारत में छोटे मकान, छोटी गाड़ियाँ, कम सुविधाओं के बावजूद भी भारतवासी के हृदय में परमात्मा प्रकट होते हैं । वे हरि के प्यार में, आनंद में आनंदित हो सकते हैं । अमेरिकावासियों को सुख के लिए डिस्को डान्स, रोक एन रोल, क्लब, सिनेमा, दुराचार की शरण जाना पड़ता है और अपना जीवन वे नष्ट करते हैं जबकि भारतीय नागरिक आनंद के लिए कन्हैया को प्यार करता है, गीत गाता है, कीर्तन करता है और जीवन उन्नत करके मुक्ति का मार्ग तय करता है ।''

भारत के भगवान राम, कृष्ण, शिव, गणपति, गीता, रामायण, भागवत को माननेवाले किसी व्यक्ति ने दुनिया के किसी भी देश में आजतक गद्दारी नहीं की । यह भारतियों की वफादारी है ।

दुनिया के अन्य देशों के वासी भारत में आकर, भारत का अन्न खाकर भारत से गद्दारी करते हैं । बम-धड़ाका करते हैं, निर्दोष निरपराधों के जीवन को तहसनहस करते हैं ।

भूर्लोक, भुवर्लोक, जनलोक, सत्यलोक, तपलोक में भी सुख नहीं है। विद्याधर, गंधर्व, यक्ष, किन्नर, देवता, नाग, असुरों के लोक में भी सुख नहीं है। सुख तो वहाँ है जहाँ संत का मन ठहरा है।''

संसार की नश्वरता और अनिश्चितता को बताते हुए पूज्य बापू ने कहा कि :

''संसार के सब काम पूरे करके कोई नहीं मरा। सब काम पूरे करने के भ्रम में रहनेवाले का भी कोई न कोई काम अधूरा रह जाता है। मनुष्य का मुख्य कर्त्तव्य कार्य है हृदय को परमात्मा से मिलाना। जो यह कार्य कर लेता है उसके दूसरे गौण कार्य अपने आप संपन्न हो जाते हैं।

मनुष्य का मुख्य कर्त्तव्य है हृदय को परमात्मा से मिलना। जो यह कार्य कर लेता है उसे दूसरे गौण कार्य अपने आप संपन्न हो जाते हैं।

परमात्मा से कुछ गुप्त नहीं रहता। कैसी भी गुप्तता से पुण्य या पाप करोगे वह परमात्मा के आगे प्रकट है। अपना दर्शन शुद्ध रखो। जैसा दर्शन होगा, ऐसे विचार बनेंगे। अपना भोजन पवित्र रखो। जिसका अन्न पवित्र होगा उसका मन भी पवित्र होगा। अपने घर में संतों के, भगवान के पवित्र मनोहारी चित्र रखो। घरवालों की आँखें उनके दर्शन से पवित्र होगी।

सरकनेवाला है वह संसार है। उसमें सब चीजें सरकनेवाली हैं। इस सरकनेवाले संसार में अपना चित्त अचल आत्मा में जोड़ लेनेवाला अचल पद में स्थित हो जाता है।

कुमति, मति, सुमति मेधा और ऋतम्भरा प्रज्ञा यह बुद्धि के उत्तरोत्तर उत्तम स्वरूप हैं। लोहे को कहीं भी रखो, जंग चढ़ जायेगा। मगर उसे पारस का स्पर्श करा दिया जाये, वह सोना बन जाय उसके बाद उसे कहीं भी रखो, उसे जंग नहीं चढ़ेगा। ऐसे ही मन को एक बार हरि के रंग में, गुरु के रंग में रंग दो। फिर चाहे उसे कहीं भी रखो, सुख-दुःख, हानि-लाभ, अनुकूल-प्रतिकूल सब परिस्थितियों में वह अडोल असंग रहेगा। मनुष्य पहले अंदर गिरता है बाद में बाहर पतन दिखता है। पहले अपने अंतःकरण को संभालो। बाहर सब संभला हुआ पाओगे।

इस सरकनेवाले संसार में अपना चित्त अचल आत्मा में जोड़ लेने वाला अचल पद में स्थित हो जाता है।

दुनिया के सब काम पूरे हो जायें उसके बाद मन को हरिरस पिलाएँगे, यह आश्वासन नहीं चलेगा। दुनिया की खटखट चलती रहेगी। चालू खटखट में ही अपना काम बना लो।''

अपरान्हकालीन सत्संग में पूज्यश्री ने अपने वास्तविक कर्त्तव्य की ओर अंगुलीनिर्देश करते हुए लाखों श्रद्धालुओं के मध्य कहा कि :

''पति पत्नी से कहता है कि मेरी सेवा करना तेरा कर्त्तव्य है। पत्नी पति से कहती है कि मेरे लिए गहने-कपड़े बनवाना आपका कर्त्तव्य है। सेठ नौकर से कहता है कि इमानदारी से काम करना तेरा कर्त्तव्य है। नौकर कहता है कि मुझे अच्छी तनखाह देना तुम्हारा कर्त्तव्य है। नेता जनता से कहता है कि मुझे वोट देना तुम्हारा कर्त्तव्य है। जनता कहती है कि हमें सुविधा देना नेता का कर्त्तव्य है। मजहबवादी कहते हैं कि तुम्हारी कमाई का दसवाँ हिस्सा धर्म के प्रचार में देना तुम्हारा कर्त्तव्य है। परंतु भगवान श्रीकृष्ण और सद्गुरु ऐसा नहीं कहते। वे तो कहते हैं कि हे मानव ! तू चैतन्य है, परमात्मा का अभिन्न अंश है। सारे बँधनों से मुक्त होना तेरा कर्त्तव्य है।

एक होता है सांसारिक कर्त्तव्य, दूसरा होता है वास्तविक कर्त्तव्य। जो वास्तविक कर्त्तव्य को, जो कि परमात्मा से संबंध जोड़ना है उसे निभाता है उसका सांसारिक कर्त्तव्य परमात्मा अपने आप संभाल लेते हैं।

जब कोई सत्कर्म फल देने को तत्पर होता है तब दैवी आयोजन में उत्साह होता है और सफलतापूर्वक उसे पूरा कर सकते हैं परंतु उसको देख दुर्भाग्यशाली लोग हृदय में जलते रहते हैं।

आगरा में सत्संग-वर्षा

दिनांक : २५ से ३० सितम्बर १९९३

''अंत:करण की प्रसन्नता प्राप्त होने पर सब दु:खों, क्लेशों का अंत हो जाता है। बुद्धि शीघ्र ही परमात्मा के स्वरूप में भलीभाँति स्थिर हो जाती है। भक्त निर्भय होता है। जो अपने को भक्त भी मानता है और भयभीत भी होता है तो उसकी भक्ति कच्ची है।''

देश-विदेश में लाखों-लाखों भक्तों के हरिभक्ति के मार्ग का प्रकाशन करने वाले जीवन्मुक्त संतप्रवर श्री आसारामजी बापू ने कहा कि :

''हाइड्रोजन और ऑक्सीजन से पानी बनता है परंतु उनको मिलाने भर से पानी नहीं बनता। उनको मिलाते समय बिजली की आवश्यकता है। वह केटेलिटिक ऐजन्ट है। उसकी उपस्थिति में ही पानी बनता है। इस प्रकार आत्मा परमात्मा का अंश है परंतु उन दोनों का मिलन तब होता है जिन्हें सदगुरु मिल जाते हैं। सदगुरु ही उन दोनों का मिलन कराते हैं। भगवान राम, भगवान कृष्ण, स्वामी विवेकानन्द, छत्रपति शिवाजी आदि सभी के गुरु थे।

भारत के युवावीर शिवाजी और अर्जुन कैसे संयमी थे! वे अपने गुरु की दीक्षा के बदौलत ही ऐसे संयमी बन पाये। शिवाजी के पास मुगल बेगमों को लाया गया। शिवाजी ने उन्हें बाइज्जत लौटा दिया। अर्जुन स्वर्ग में ऊर्वशी के प्रलोभन में नहीं आया। वह नपुंसक बनने का शाप स्वीकार करता है, परंतु संयम नहीं छोड़ता। ऐसे वीर भारत में पकते थे।''

विश्ववंद्य विभूति श्री आसारामजी बापू ने कहा कि :

''जन्म-मृत्यु के चक्र को तोड़ने का, जीते जी मुक्ति पाने का सामर्थ्य बुद्धियोग में है। बुद्धि का उपयोग संसार की चीजें जुटाने में जो करता है वह ठगा-सा रह जाता है। जो भगवान के लिए भजन करता है, जप, तप, ध्यान करता है, बुद्धि को परमात्मा में लगाता है उस पर परमात्मा प्रसन्न होते हैं।

माँ की गोद में जो बालक आता है उसे अपने पोषण के लिए चिंता नहीं करनी पड़ती। उसकी चिंता उसकी माँ करती है। वैसे ही परमात्मा को सब पता है कि हमें किस चीज की आवश्यकता है। हमें किस स्थिति में रखने से हमारा कल्याण हो सकता है यह सब परमात्मा जानते हैं। हमें तो उनके शरणागत होकर अपने हृदय से उन्हें प्रेम करना चाहिए।

जन्म-मृत्यु के चक्र को तोड़ने का, जीते जी मुक्ति पाने का सामर्थ्य बुद्धियोग में है।

मरना-जन्मना शरीर का धर्म है, काला-गोरा होना चमड़े का धर्म है, लँबा-नाटा होना हड्डियों का धर्म है परंतु हमारा अपना धर्म परमात्मा से प्रीत करना है।

मेरा-तेरा, मोह-माया को छोड़कर परमात्मा से प्रेम करना चाहिए। परमात्मा से माँगना हो तो ऐसा माँगना कि दूसरी बार माँगना न पड़े। परमात्मा से जो संसार की क्षुद्र चीजें माँगता है वह धोखे में है।''

प्राणीमात्र के परम हितैषी पूज्य बापू ने कहा :

''सुख बढ़े तो भी संतशरण जाइए ताकि सुख में अहंकार न बढ़े और दु:ख पड़े तब भी संतशरण जाइये ताकि दु:ख में होंसला गिरे नहीं, और दु:ख को सहन करने की शक्ति का विकास हो।

आत्मा परमात्मा का अंश है परंतु उन दोनों का मिलन तब होता है जिन्हें सद्गुरु मिल जाते हैं।

सुंदर पत्नी, आज्ञांकित पुत्र, वफादार मुनीम मिल जाना कोई बड़ी बात नहीं है। हृदय में शांति हो, आनंद हो, स्वभाव में हरिभक्ति का सत्त्वगुण हो, चित्त में परमात्मप्रसाद हो तो जीवन सफल है। अतल, वितल, तलातल, रसातल, पाताल,

भूर्लोक, भुवर्लोक, जनलोक, सत्यलोक, तपलोक में भी सुख नहीं है। विद्याधर, गंधर्व, यक्ष, किन्नर, देवता, नाग, असुरों के लोक में भी सुख नहीं है। सुख तो वहाँ है जहाँ संत का मन ठहरा है।''

संसार की नश्वरता और अनिश्चितता को बताते हुए पूज्य बापू ने कहा कि :

''संसार के सब काम पूरे करके कोई नहीं मरा। सब काम पूरे करने के भ्रम में रहनेवाले का भी कोई न कोई काम अधूरा रह जाता है। मनुष्य का मुख्य कर्त्तव्य कार्य है हृदय को परमात्मा से मिलाना। जो यह कार्य कर लेता है उसके दूसरे गौण कार्य अपने आप संपन्न हो जाते हैं।

मनुष्य का मुख्य कर्त्तव्य है हृदय को परमात्मा से मिलना। जो यह कार्य कर लेता है उसे दूसरे गौण कार्य अपने आप संपन्न हो जाते हैं।

परमात्मा से कुछ गुप्त नहीं रहता। कैसी भी गुप्तता से पुण्य या पाप करोगे वह परमात्मा के आगे प्रकट है। अपना दर्शन शुद्ध रखो। जैसा दर्शन होगा, ऐसे विचार बनेंगे। अपना भोजन पवित्र रखो। जिसका अन्न पवित्र होगा उसका मन भी पवित्र होगा। अपने घर में संतों के, भगवान के पवित्र मनोहारी चित्र रखो। घरवालों की आँखें उनके दर्शन से पवित्र होगी।

सरकनेवाला है वह संसार है। उसमें सब चीजें सरकनेवाली हैं। इस सरकनेवाले संसार में अपना चित्त अचल आत्मा में जोड़ लेनेवाला अचल पद में स्थित हो जाता है।

कुमति, मति, सुमति मेधा और ऋतम्भरा प्रज्ञा यह बुद्धि के उत्तरोत्तर उत्तम स्वरूप हैं। लोहे को कहीं भी रखो, जंग चढ़ जायेगा। मगर उसे पारस का स्पर्श करा दिया जाये, वह सोना बन जाय उसके बाद उसे कहीं भी रखो, उसे जंग नहीं चढ़ेगा। ऐसे ही मन को एक बार हरि के रंग में, गुरु के रंग में रंग दो। फिर चाहे उसे कहीं भी रखो, सुख-दुःख, हानि-लाभ, अनुकूल-प्रतिकूल सब परिस्थितियों में वह अडोल असंग रहेगा। मनुष्य पहले अंदर गिरता है बाद बाहर पतन दिखता है। पहले अप अंतःकरण को संभालो। बाहर स संभला हुआ पाओगे।

इस सरकनेवाले संसार में अपना चित्त अचल आत्मा में जोड़ लेने वाला अचल पद में स्थित हो जाता है।

दुनिया के सब काम पूरे हो जा उसके बाद मन को हरिरस पिलाएँग यह आश्वासन नहीं चलेगा। दुनिया की खटखट चलती रहेगी। चालू खटखट में ही अपना काम बना लो।''

अपरान्हकालीन सत्संग में पूज्यश्री ने अपने वास्तविक कर्त्तव्य की ओर अंगुलीनिर्देश करते हुए लाखों श्रद्धालुओं के मध्य कहा कि :

''पति पत्नी से कहता है कि मेरी सेवा करना तेरा कर्त्तव्य है। पत्नी पति से कहती है कि मेरे लिए गहने-कपड़े बनवाना आपका कर्त्तव्य है। सेठ नौकर से कहता है कि इमानदारी से काम करना तेरा कर्त्तव्य है। नौकर कहता है कि मुझे अच्छी तनखाह देना तुम्हारा कर्त्तव्य है। नेता जनता से कहता है कि मुझे वोट देना तुम्हारा कर्त्तव्य है। जनता कहती है कि हमें सुविधा देना नेता का कर्त्तव्य है। मजहबवादी कहते हैं कि तुम्हारी कमाई का दसवाँ हिस्सा धर्म के प्रचार में देना तुम्हारा कर्त्तव्य है। परंतु भगवान श्रीकृष्ण और सद्गुरु ऐसा नहीं कहते। वे तो कहते हैं कि हे मानव ! तू चैतन्य है, परमात्मा का अभिन्न अंश है। सारे बँधनों से मुक्त होना तेरा कर्त्तव्य है।

एक होता है सांसारिक कर्त्तव्य, दूसरा होता है वास्तविक कर्त्तव्य। जो वास्तविक कर्त्तव्य को, जो कि परमात्मा से संबंध जोड़ना है उसे निभाता है उसका सांसारिक कर्त्तव्य परमात्मा अपने आप संभाल लेते हैं।

जब कोई सत्कर्म फल देने को तत्पर होता है तब दैवी आयोजन में उत्साह होता है और सफलतापूर्वक उसे पूरा कर सकते हैं परंतु उसको देख दुर्भाग्यशाली लोग हृदय में जलते रहते हैं।

जनतन्त्रवाद, साम्यवाद, मूड़ीवाद आदि अनेक वाद आये परंतु अशांति बढ़ी है, दुःख, चिंताएँ बढ़ी हैं। भारतीय संस्कृति के रास्ते महापुरुषों ने जो शांति बताइ है उसके बिना हजार उपाय कोई कर ले, शांति नहीं मिल सकती। महापुरुष के रास्ते चलो तो शांति, सुख, आनंद तुम्हारा स्वभाव है।

दुनिया के विषयों का मजा आखिर में दुःख, चिंता क्लेश देता है। दुनिया के लोग डिस्को डान्स में, दुराचार में जो मजा लेते हैं और अपना सत्यानाश करते हैं उससे कई गुना सात्त्विक आनंद भक्त सत्संग, कीर्तन में खुले आम लेता है। जल में क्या मजा है, मछली से पूछो। दीये में क्या आनंद है, कीट-पतंग से पूछो। फूल में क्या रस है, मधुमक्खी से पूछो। भक्ति में क्या मजा है, किसी भक्त से जा पूछो। सत्संग में क्या मजा है, किसी सत्संगी से जा पूछो।''

गीताचार्य पूज्यपाद बापू ने कहा कि :

''भगवान श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं कि मेरा स्मरण करते हुए युद्ध कर। जब युद्ध करते हुए भगवान का स्मरण हो सकता है तो रोटी बनाते हुए या दुकान चलाते हुए चालू व्यवहार में स्मरण करना क्या असंभव है ?

भगवान के रास्ते चलनेवाले पलायनवादी नहीं होते, अकर्मण्य नहीं होते। उन्हें पलायनवादी कहना बुद्धि की निम्नता का सूचक है। क्या अर्जुन, युधिष्ठिर, हनुमान, लक्ष्मण, प्रहलाद, रामतीर्थ, विवेकानंद पलायनवादी थे ? भगवान का भक्त संसार के कार्यभार भली प्रकार निबाह सकता है।

जीवन में श्रद्धा बहुत जरूरी चीज है। श्रद्धा रहित मनुष्य पशु से बदतर है। मनुष्य को अपनी माँ और बाप पर श्रद्धा रखना पड़ता है। डॉक्टर और नाई पर भी श्रद्धा रखना पड़ता है कि ये लोग सही जगह अस्त्रा घुमायेंगे। संसार के सब कार्य श्रद्धा से ही संपन्न होते हैं तो परमात्मा के मार्ग पर चलने के लिए, जन्म-मरण का कार्य एक ही जन्म में पूरा करने के लिए शास्त्र और संतवचन पर श्रद्धा कर लें तो क्या आश्चर्य है ? इसीमें सच्ची बुद्धिमानी है।

आगरा में

सत्संग समारोह के मंगल प्रारंभ में कुमारिकाओं के व्दारा पूज्यश्री का

स्वागतगान

धरती जागी अम्बर जागा, जागा भाग्य ब्रज धाम का।
स्वागत आज ताज नगरी में, बापू आसाराम का ॥

श्री गुरुवर के शुभागमन से, दिशा-दिशा सद्भाव भरे।
दो मंगल आशिष कि जो, हर दीन दुःखी के घाव भरे।
ताना ऐसा राम बिताना, क्या भय वर्षा धाम का।
स्वागत आज ताज नगरी में, गुरुवर आसाराम का ॥

हर मानव भाई भाई हों, ये वसुधा परिवार लगे।
मन मन बने अहिंसा का घर, जन जन दीखे प्रेम पगे।
साँची कथनी साँची करनी, साज सजे निष्काम का।
स्वागत आज ताज नगरी में, स्वामी आसाराम का ॥

रहें न हम स्वार्थ के चेरे, ऐसे नव संकल्प करें।
यह जीवन परहित में बीते, ऐसे भव का सिंधु तेरे।
ज्ञानदीप के इस प्रकाश में, व्रत लें प्रभु के नाम का।
स्वागत आज ताज नगरी में, ज्ञानी आसाराम का ॥

- कवि सोम ठाकुर

❀ जो वस्तु कर्म से प्राप्त होती है उसके लिये संसार की सहायता तथा भविष्य की आशा की आवश्यकता होती है परन्तु जो वस्तु त्याग से प्राप्त होती है उसके लिये न संसार की सहायता चाहिये न भविष्य की आशा।

❀ सद्गुरु जैसा प्रेमपूर्ण, हितचिन्तक, कृपालु विश्व भर में दूसरा कोई नहीं।

परमहंसों का ॐ प्रसाद

पूज्यपाद संत श्री आसारामजी महाराज

स्वचर्चा में रुचि हो और परचर्चा से बचे तो 'स्व' में प्रीति स्वतःसिद्ध हो जायगी ।

'स्व' क्या है और 'पर' क्या है ?

जो सदा है, स्वाभाविक है वह है 'स्व' आत्मा परमात्मा । जो परिवर्तित होता जाय, संभालने पर भी जो न संभले वह है 'पर' ।

संसार में दो चीजें होती हैं : एक वह जो दिखती है । दूसरी वह जो हमारी है । जो चीजें दिखती हैं वे सब हमारी नहीं और जो हमारी हैं वे सदा टिकती नहीं । लेकिन हम जो हैं वह सदा है ।

जो हमारी चीजें हैं वे सदा टिकेगी नहीं अतः वर्तमान में उनका बढ़िया से बढ़िया सदुपयोग कर लो । अन्यथा चीजें बिछुड़नेवाली तो हैं ही । जैसे, हमने खिचड़ी बनाई । या तो वह खा लो अथवा किसीको खिला दो । अन्यथा, वह पड़ी-पड़ी बासी हो जायगी, खराब हो जायगी, बर्तन में बदबू हो जायगी ।

ऐसे ही ये सब पदार्थ और हमारा शरीर पाँच भूतों की खिचड़ी है । दूसरों के हित में इनका सदुपयोग कर लो तो आपका मन विभु हो जायगा, व्यापक हो जायगा । 'स्व' में प्रीति अपने आप प्रकट होने लगेगी ।

परचर्चा और परप्रीति हटने से स्वचर्चा और स्वप्रीति अपने आप आ जाती है ।

'स्व' वह है जिसको आप कदापि छोड़ नहीं सकते ।

'पर' वह है जिसको आप सदा रख नहीं सकते । जिसको सदा रख नहीं सकते उसको 'पर' बोलते हैं ।

जिसको छोड़ नहीं सकते उसको 'स्व' बोलते हैं । इस शरीर को सदा रख नहीं सकते । शरीर की वस्तुओं को सदा रख नहीं सकते । लेकिन अपने आपको कभी छोड़ नहीं सकते । मरने के बाद भी अपना आपा रहेगा ।

परचर्चा के बदले परसेवा कर लो । परसेवा करोगे तो 'पर' की आसक्ति मिट जायगी और 'स्व' में प्रीति होने लगेगी । जिनको 'स्व' में प्रीति हो जाती है ऐसे सत्पुरुषों के पीछे तो भगवान घूमा करते हैं । जड़भरतजी और दत्तात्रेय जैसों की 'स्व' में प्रीति हो गई । नरसिंह मेहता और नामदेवजी की 'स्व' में प्रीति हो गई ।

आत्मा, परमात्मा 'स्व' है । शरीर, इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि ये सब 'पर' हैं ।

अपने शरीर में प्रीति या और किसीके शरीर में प्रीति, अपनी वस्तुओं में प्रीति या औरों की वस्तुओं में प्रीति... यह सब परप्रीति और परचर्चा है ।

'पर' को तो परोपकार में लगा दो और 'स्व' के स्वराज्य में आ जाओ ।

इससे मन विभु (व्यापक) हो जायगा ।

मन परिच्छिन्न है... सुख लेने की इच्छा करता है । दूसरे लोग हमसे अच्छा व्यवहार करें यह आशा रखता है । सब लोग दूसरों से अच्छे व्यवहार की आशा करते हैं और अपनी तरफ से जैसा-तैसा, जो आये वह करते रहते हैं इसलिये 'स्व' से विमुख हो जाते हैं । 'पर' पर आधारित हो जाते हैं । 'स्व' से विमुख और 'पर' पर आधारित माने पराधीन । ...और पराधीन सदा दुःखी रहता है ।

पराधीन सपने हू सुख नाहीं ।

अतः व्यवहार करने में, कार्य करने में, विचार करने में सावधान रहें । करने में सावधान

पूर्ण सुखी तो वह है जिसने पूर्ण 'स्व' को जाना । 'स्व' है आत्मा । आत्मा पूर्ण है, सुख-स्वरूप है ।

लक्ष्मी-पूजन

पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

लक्ष्मी चार प्रकार की होती है। जिस धन से भोग, विलास, आलस्य, दुराचार बढ़े, किसीकी टांग खींचने की, परपीड़न की वृत्ति बढ़े वह अलक्ष्मी है।

जिस धन से सुख-वैभव भोगा जाये वह वित्त है।

जिस धन से कुटुंब-परिवार, पास-पड़ौस, दीन-दु:खी को भी सुखी रखा जाये वह लक्ष्मी है।

जिस धन से परमात्मा की सेवा हो, परमात्मतत्त्व का प्रचार हो, परमात्मशांति के गीत दूसरों के दिल में गुँजाये जायँ वह महालक्ष्मी है।

सनातन धर्म ऐसा नहीं मानता कि धनवानों को ईश्वर-प्राप्ति नहीं हो सकती।

सनातन धर्म ऐसा नहीं मानता कि धनवानों को ईश्वर-प्राप्ति नहीं हो सकती। अपने शास्त्रों में तो दृष्टांत हैं कि जनक राजा राज्य करते थे, मिथिलानरेश थे और आत्म-साक्षात्कारी भी थे। दशरथ राजा राज्य करते थे, वे धनवान ही तो थे, जिनके घर में भगवान श्रीराम प्रकट हुए। जो सत्कर्मों में लक्ष्मी को लुटाता है, खुल्ले हाथ पवित्र कार्यों में लगाता है उसकी लक्ष्मी कई पीढ़ियों तक बनी रहती है, जैसे जनक आदि के जीवन में हुआ। जनक की बाईस पीढ़ियाँ तर गईं, बाईस जनक हो गये।

लक्ष्मी-पूजन की प्रथा शहरों में भी है, गाँवों में भी है।

कुछ कहानियों के द्वारा सुनी हुई एक कथा है :

जो सत्कर्मों में लक्ष्मी को लुटाता है, खुल्ले हाथ पवित्र कार्यों में लगाता है उसकी लक्ष्मी कई पीढ़ियों तक बनी रहती है।

भगवान विष्णु एक बार मृत्युलोक में माता लक्ष्मी सहित घूमने को पधारे। भगवान ने लक्ष्मीजी से कहा:

''दक्षिण दिशा तरफ तू देखना मत। जब तक मैं नहीं आऊँ तब तक तू यहीं बैठना।'' ऐसा कहकर भगवान दक्षिण दिशा में चल पड़े। कथा कहती है कि लक्ष्मीजी के मन में आया कि : ''मुझे कहते हैं उधर देखना मत और खुद वहीं चले गये ! क्या बात है ? देखूँ तो सही जरा ! 'देखना मत' जो कहा है तो उसकी वजह क्या है वह तो देखूँ !'' लक्ष्मीजी ने जरा मुँह पलटकर देखा तो... ओह ! सरसों का खेत लहरा रहा था और सरसों के पीले पीले फूल !

लक्ष्मीजी जरा टहलने को निकल पड़ी। पीले पीले प्यारे प्यारे फूल तोड़कर शृंगार किया। आगे गन्ने का खेत था। एक गन्ना तोड़ा और चूसने लगीं। इतने में खेत का मालिक आ गया और देखा कि बिना पूछे कोई स्त्री हमारा गन्ना खा रही है। उसको तो पता नहीं था कि यह लक्ष्मी है। खेतवाला स्त्री को पूछता है :

''किसीके खेत में आकर गन्ना तोड़ लेना और खाने लग जाना ! यह चोरी तुमने क्यों की ?''

इतने में भगवान विष्णुजी आ गये। विष्णुजी ने सोचा कि हम यदि सच्चाई और धर्म-कर्म नहीं मानेंगे को दूसरे लोग कैसे मानेंगे ? वे लक्ष्मी पर बिगड़ पड़े :

''एक तो मेरी आज्ञा का उल्लंघन किया, वहीं बैठी नहीं रही, पीछे मुड़कर देखा, फिर यह शृंगार किया, बाहर सुख ढूँढा, भीतर के सुख को भूल गयी और चोरी करके गन्ना चूसने लग गयी। तू मेरे पास रहने के लायक नहीं है। जा, बारह साल तक इस किसान के घर रह, गन्ना चूसा है तो उसकी सेवा कर। दासी की तरह घर बुहारा कर। तब तेरा प्रायश्चित्त पूरा होगा।''

लक्ष्मीजी ने आज्ञा मानी। बारह साल बीत गये। लक्ष्मी जी जिसके घर में हो उसको तो फिर धन-धान्य की कमी क्या ? धन खूब बढ़ता गया। वह किसान तो बड़ा धनवान हो गया। बारह साल पूरे हुए। लक्ष्मीजी ने कहा :

(अनु. पेज ६ पर...)

परमहंसों का प्रसाद

पूज्यपाद संत श्री आसारामजी महाराज

स्वचर्चा में रुचि हो और परचर्चा से बचे तो 'स्व' में प्रीति स्वतःसिद्ध हो जायगी ।

'स्व' क्या है और 'पर' क्या है ?

जो सदा है, स्वाभाविक है वह है 'स्व' आत्मा परमात्मा । जो परिवर्तित होता जाय, संभालने पर भी जो न संभले वह है 'पर' ।

संसार में दो चीजें होती हैं : एक वह जो दिखती है । दूसरी वह जो हमारी है । जो चीजें दिखती हैं वे सब हमारी नहीं और जो हमारी हैं वे सदा टिकती नहीं । लेकिन हम जो हैं वह सदा है ।

जो हमारी चीजें हैं वे सदा टिकेगी नहीं अतः वर्तमान में उनका बढ़िया से बढ़िया सदुपयोग कर लो । अन्यथा चीजें बिछुड़नेवाली तो हैं ही । जैसे, हमने खिचड़ी बनाई । या तो वह खा लो अथवा किसीको खिला दो । अन्यथा, वह पड़ी-पड़ी बासी हो जायगी, खराब हो जायगी, बर्तन में बदबू हो जायगी ।

ऐसे ही ये सब पदार्थ और हमारा शरीर पाँच भूतों की खिचड़ी है । दूसरों के हित में इनका सदुपयोग कर लो तो आपका मन विभु हो जायगा, व्यापक हो जायगा । 'स्व' में प्रीति अपने आप प्रकट होने लगेगी ।

परचर्चा और परप्रीति हटने से स्वचर्चा और स्वप्रीति अपने आप आ जाती है ।

'स्व' वह है जिसको आप कदापि छोड़ नहीं सकते ।

'पर' वह है जिसको आप सदा रख नहीं सकते ।

जिसको सदा रख नहीं सकते उसको 'पर' बोलते हैं ।

जिसको छोड़ नहीं सकते उसको 'स्व' बोलते हैं ।

इस शरीर को सदा रख नहीं सकते । शरीर की वस्तुओं को सदा रख नहीं सकते । लेकिन अपने आपको कभी छोड़ नहीं सकते । मरने के बाद भी अपना आपा रहेगा ।

परचर्चा के बदले परसेवा कर लो । परसेवा करोगे तो 'पर' की आसक्ति मिट जायगी और 'स्व' में प्रीति होने लगेगी । जिनको 'स्व' में प्रीति हो जाती है ऐसे सत्पुरुषों के पीछे तो भगवान घूमा करते हैं । जड़भरतजी और दत्तात्रेय जैसों की 'स्व' में प्रीति हो गई । नरसिंह मेहता और नामदेवजी की 'स्व' में प्रीति हो गई ।

आत्मा, परमात्मा 'स्व' है । शरीर, इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि ये सब 'पर' हैं ।

अपने शरीर में प्रीति या और किसीके शरीर में प्रीति, अपनी वस्तुओं में प्रीति या औरों की वस्तुओं में प्रीति... यह सब परप्रीति और परचर्चा है ।

'पर' को तो परोपकार में लगा दो और 'स्व' के स्वराज्य में आ जाओ ।

इससे मन विभु (व्यापक) हो जायगा ।

मन परिच्छिन्न है... सुख लेने की इच्छा करता है । दूसरे लोग हमसे अच्छा व्यवहार करें यह आशा रखता है । सब लोग दूसरों से अच्छे व्यवहार की आशा करते हैं और अपनी तरफ से जैसा-तैसा, जो आये वह करते रहते हैं इसलिये 'स्व' से विमुख हो जाते हैं । 'पर' पर आधारित हो जाते हैं । 'स्व' से विमुख और 'पर' पर आधारित माने पराधीन । ...और पराधीन सदा दुःखी रहता है ।

पूर्ण सुखी तो वह है जिसने पूर्ण 'स्व' को जाना । 'स्व' है आत्मा । आत्मा पूर्ण है, सुख-स्वरूप है ।

पराधीन सपने हू सुख नाहीं ।

अतः व्यवहार करने में, कार्य करने में, विचार करने में सावधान रहें । करने में सावधान

रहेंगे तो होने में प्रसन्नता आयेगी । करने में असावधान रहे तो होने में अप्रसन्नता रहेगी ही । जो कुछ करें, सावधान होकर करें ।

जो कुछ करें, अपने सुख के लिये नहीं । सुख देने के भाव से कार्य करें । जब सुख के दाता बन गये तो स्वयं दु:खी नहीं हो सकते । यह प्रकृति का नियम है ।

'पर' से जो कुछ किया जाता है वह दिखता है 'पर' लेकिन घूम फिर कर वह 'पर' 'स्व' में बदल जाता है । एक ही परमात्मा 'स्व' और 'पर' के रूप में दिख रहा है ।

हम 'पर' से सुख लेना चाहते हैं और 'स्व' को खो देते हैं । 'पर' को सुख दो तो वही 'स्व' में, सुख-स्वरूप में प्रकट हो जाता है । हम दुनियाँ में जो कुछ करते हैं, वह घूम फिर कर कई गुना होकर अपनी ओर ही लौटता है ।

परहित सरिस धरम नहीं भाई ।
परपीड़न सम नहीं अधमाई ॥

'पर' की चर्चा नहीं मगर 'पर' का उपकार कर दो और 'स्व' का आदर कर दो । 'स्व' का आदर यह है कि 'स्व' को जानो । 'स्व' को 'स्व' जानना और मानना 'स्व' का आदर है ।

लोग 'स्व' को 'पर' मानते हैं और 'पर' से 'स्व' को सुखी रखने की कोशिश करते हैं । इसीलिए सारी साधनाएँ, ध्यान-भजन, जप-तप करते हुए भी जो परितृप्ति होनी चाहिए वह नहीं होती । ध्यान-भजन तो करते हैं लेकिन कोई धन का सहारा लेकर सुखी होना चाहता है कोई सत्ता का, कोई पत्नी का सहारा लेकर सुखी होना चाहता है कोई पति का, कोई मित्र का सहारा लेकर सुखी होना चाहता है कोई किसीका... लेकिन कोई पूर्ण सुखी नहीं मिलेगा ।

जो प्रभु का हो जाता है उसके आगे देवता भी झुक जाते हैं तो आम की डाल झुक गई इसमें कौन-सी बड़ी बात है ।

भगवान को तो कोई माने कोई नहीं माने लेकिन जिसका स्वभाव बढ़िया है उसको तो सब मानते हैं ।

पूर्ण सुखी तो वह है जिसने पूर्ण 'स्व' को जाना । 'स्व' है आत्मा । आत्मा पूर्ण है, सुख-स्वरूप है । पूर्ण को जानने के लिये उसकी तरफ प्रीति होनी चाहिए । उसकी तरफ प्रीति होते ही संसार की आसक्ति मिटने लगती है । संसार की आसक्ति मिटते ही संसार की चीजें दास होने लगती हैं । संसार में आसक्ति होती है तो चीजें दूर भागती हैं । आसक्ति मिटने से वे नजदीक आने लगती हैं ।

एक महात्मा यात्रा करते, घूमते-घामते आम के एक बगीचे में पहुँचे । अच्छी ठंडक देखकर विश्राम के लिए बैठे । दोपहर हुई । भिक्षा का समय हो गया । भूख लगी । महात्मा बागबान से बोले :

''अरे भाई ! आम-वाम कुछ मिल जाय....''

''महाराजजी ! पूछते क्या हो ? जो पसन्द आये तोड़ लो । सब तुम्हारा ही है...।'' उदारदिल बागबान बोला ।

'सब तुम्हारा ही है' सुनकर महात्माजी भावविभोर हो उठे । आ गये अपने ब्रह्मभाव में । 'जब सब मेरा ही है तो फिर मुझे तोड़ने की भी क्या आवश्यकता है ?' ऐसा सोचकर आम के पेड़ की छाया में बैठ गये । देखते ही देखते पके आमवाली डाली नीचे झुक गई, महात्माजी ने एक पका आम ले लिया और डाली वापस ऊपर चली गई । बागबान यह देखकर दंग रह गया । जाकर राजा को बताया । राजा दर्शन करनेको आया और प्रणाम करके बोला :

''आप जैसे महात्मा हमारे यहाँ पधारे, बड़े भाग्य की बात है । आपके समक्ष आम की डाल झुक गई यह जानकर मैं बहुत प्रभावित हो गया हूँ ।''

महात्मा बोले : ''जो प्रभु का हो जाता है उसके आगे देवता भी झुक जाते हैं तो आम की डाल झुक गई इसमें कौन-सी बड़ी बात है । जो 'स्व' का हो जाता है

उसके आगे तैंतीस करोड़ देवता भी झुकते हैं तो दूसरों की क्या बात है ? आम की डाल झुकी तो मैं बड़ा हो गया क्या ? नहीं... बड़ा तो है परमात्मा ।''

जिसको तुम 'मैं' मानते हो वह बड़ा नहीं, 'मैं' मानने का भाव जिससे उत्पन्न होता है वह आत्मा बड़ा है । वही आत्मा अपना 'स्व' है । 'स्व' से प्रीति करना ही जीवन का लक्ष्य है ।

हम लोगों का असली स्वभाव विभु है लेकिन परचिन्तन में हम अल्प हो गये हैं ।

परचर्चा से बचो । परचर्चा से बचते ही, परप्रीति से बचते ही स्वचर्चा और स्वप्रीति होने लगती है ।

'इसने क्या किया ? उसने क्या किया ? वह क्या बोला ?'- इस प्रकार की परचर्चा में हम लोगों का दिमाग खूब खर्च हो जाता है और इसीलिये 'स्व' में नहीं आ पाते ।

लोग ध्यान-भजन, जप-तप-अनुष्ठान, तीर्थयात्रा, सेवा आदि तो करते हैं लेकिन अपना स्वभाव सुधारने पर ध्यान नहीं देते । 'स्वभाव' यानी 'स्व' के भाव को, अपने भाव को जानते नहीं, जानने की चेष्टा करते नहीं, 'स्वभाव' की रक्षा करते नहीं । परचर्चा इतनी हो जाती है कि 'स्वभाव' बिगड़ जाता है और 'परभाव' आ जाता है ।

भगवान को तो कोई माने कोई नहीं माने लेकिन जिसका स्वभाव बढ़िया है उसको तो सब मानते हैं । नास्तिक लोग भी उसको मानते हैं । जिसका स्वभाव खराब है उसको तो अपने कुटुम्ब-परिवार के लोग भी नहीं मानते, अपने मोहल्लेवाले और अपनी जातिवाले भी नहीं मानते । जिसका स्वभाव बढ़िया हो गया है उसको तो अपने कुटुम्बवाले, अपने जातिवाले तो क्या पर कुटुम्बवाले और पर जातिवाले, पर राज्यवाले भी प्यार करेंगे ।

अप्सरा स्वर्ग में चली गई तो शुक्र भी स्थूल शरीर छोड़कर सूक्ष्म शरीर से स्वर्ग में पहुँच गये ।

जो परचर्चा से बचा है उसका स्वभाव सुधर जायगा । जो 'स्वभाव' में है, 'स्व' के भाव में है वह आनन्दित होता है, प्रसन्न होता है, शांत होता है, विभु होता है । 'स्व' तो है आत्मा । जो आत्मभाव में है वह परमानन्द को पाता है ।

हम लोगों का असली स्वभाव विभु है लेकिन पर चिन्तन में हम अल्प हो गये हैं । हमारी आत्मा तो है व्यापक लेकिन परचर्चा में, परचिन्तन में, संकल्प और विकल्प में हमारी शक्तियाँ नष्ट हो गई । अब दो रोटी के लिये जीवन गँवा रहे हैं । वस्त्र और निवास के लिए पूरी आयु खर्च कर देते हैं ।

परचर्चा से बचना, स्व में प्रीति होना यह मानव जन्म का ऊँचे से ऊँचा काम है । यह ऊँचा काम जिसने कर लिया उसका तो बेड़ा पार हो ही गया, उसकी सेवा करनेवालों को भी देवता लोग अर्घ्यपाद्य से पूजन करके अपना भाग्य बनाते हैं ।

भृगु ऋषि परचर्चा से बचे, 'स्व' में केन्द्रित हो गये । शुक्र ने उनकी सेवा की । शुक्र ने योगाभ्यास किया, ध्यान किया तो धारणा तीसरे नेत्र में पहुँची । सूक्ष्म जगत का दीदार होने लगा । शुक्र को विश्वाची अप्सरा दिखी । अप्सराएँ बड़ी आकर्षक और प्रतिभासंपन्न होती हैं । शुक्र पूरे परचर्चा में भी नहीं थे और पूरे 'स्व' भाव में भी नहीं टिके थे, बीच में ही झोले खा रहे थे ।

अप्सरा स्वर्ग में चली गई तो शुक्र भी स्थूल शरीर छोड़कर सूक्ष्म शरीर से स्वर्ग में पहुँच गये । सुरपति इन्द्र ने उनका आदर-सत्कार किया, पूजन किया । चाहे वे अप्सरा में आसक्तचित्त होकर मोहवश स्वर्ग में पहुँचे थे लेकिन थे तो 'स्व' में पूरे केन्द्रित आत्मवेत्ता ब्रह्मर्षि भृगु के शिष्य । इसलिये स्वर्ग में उनका पूजन हुआ, इन्द्र ने उन्हें अपने आसन पर बिठाया ।

भगवान शिवजी वशिष्ठजी से बोले ''हे मुनीश्वर ! आत्मदेव का ध्यान करना ही धूप-दीप है और पूजन की सब सामग्री यही है । ध्यान ही उस देव को प्रसन्न

करता है और उससे परमानन्द प्राप्त होता है। हे मुनीश्वर ! मूढ़ भी इस प्रकार ध्यान से उस ईश्वर की पूजा करे तो त्रयोदश निमेष में जगत-दान के फल को पाता है। सत्रह निमेष के ध्यान से प्रभु को पूजे तो अश्वमेध यज्ञ के फल को पाता है। केवल ध्यान से आत्मा का एक घड़ी पर्यन्त पूजन करे तो राजसूय यज्ञ के फल को पाता है और जो दिन भर ध्यान करे तो असंख्य अमित फल पाता है।

हे मुनीश्वर ! यह परम योग है, यही परम क्रिया है और यही परम प्रयोजन है।''

किसी साधक के सामने दुष्ट पदार्थ रख दीये जाय तो उसे लगेगा कि मेरे कौनसे पापों का उदय हुआ कि ये चीजें सामने आयी ?

जो आत्मवेत्ता, ब्रह्मवेत्ता पवित्र सत्पुरुष हैं उनका दर्शन करने जाते हैं तो एक-एक कदम पर यज्ञ करने का फल होता है। जिन महापुरुषों का दर्शन करके संसारीजनों के पाप कटते हैं, पुण्य बढ़ते हैं, जिनका दर्शन करके लोग पवित्र होते हैं ऐसे महापुरुष भी उस 'स्व' आत्मा का ध्यान करके परम पवित्र होते हैं।

देव मन्दिर के द्वार तो पुजारी न जाने कब खोले, कब बन्द करे लेकिन दिल का मन्दिर तो तुम जब चाहो, जितनी देर चाहो, जहाँ चाहो खोल सकते हो, आत्मदेव का ध्यान-स्मरण कर सकते हो, 'स्व' में केन्द्रित हो सकते हो। लेकिन पर चर्चा की आदत इतनी पड़ गई है कि 'स्व' के मन्दिर का पता ही नहीं। पर चर्चा करते-करते फिर परमन्दिर में, परघर में, परव्यवहार में बह गये। 'स्व' में नहीं आये और 'स्व' का पता नहीं इसलिये 'स्वभाव' का भी पता नहीं। स्वभाव का भी ठिकाना नहीं।

व्यक्ति का स्वभाव बढ़िया हो तो मन भी प्रसन्न रहता है। स्वभाव यानी अपना भाव। अपना भाव सदा वर्तमान में होता है। भूत और भविष्य मन की कल्पना से होते हैं। तब अपना भाव नहीं होता।

स्वभाव से आदमी सुन्दर हो तो चाहे कितना भी दुःख पड़े, वह दुःखी नहीं होगा और चाहे कितना भी सुख आवे वह अभिमानी नहीं होगा। परचर्चा से बचने से स्वभाव सुधरता है। परचर्चा कम होते ही स्वभाव का चिन्तन अधिक होगा। 'स्व' है आत्मा। 'पर' है संसार। 'पर' कभी सदा साथ रहेगा नहीं और 'स्व' कभी छूटेगा नहीं। रात्रि की प्रगाढ़ नींद में तिजोरी छूट जाती है, पत्नी, पुत्र, परिवार आदि सब छूट जाते हैं, अपना शरीर भी विस्मृत हो जाता है, छूट ही जाता है लेकिन आत्मा तो तब भी होता ही है। मृत्यु के बाद भी आत्मा का त्याग नहीं हो सकता। और सब छूट जाता है लेकिन 'स्व' आत्मा कभी छूटता नहीं। उसके अभिमुख जो हो गया उसका बेड़ा पार....।

अतः परचर्चा से बचो। परचर्चा से बचे कि 'स्व' में प्रीति हुई। परचिन्तन से बचे, फिर स्वःचिन्तन की जरूरत नहीं पड़ेगी, 'स्व' तो अपने आप प्रकट हो जायगा। परचिन्तन से बचने के लिए स्वचिन्तन करना पड़ता है। परचिन्तन से बचे तो स्वचिन्तन की भी आवश्यकता नहीं रही। 'स्व' का एक बार पता चल जाता है तो 'स्व' के चिन्तन की आवश्यकता नहीं रहती। तुम्हारा नाम रख दिया गोविन्दभाई। पक्का हो गया। रात को नींद के समय भी कोई पुकारे कि 'गोविन्दभाई...!' तो उठकर बोलोगे : 'हाँ...।' उठकर किसीको पूछने थोड़े ही जाओगे कि 'मैं गोविन्दभाई हूँ कि नहीं' ! पक्का हो गया है कि 'मैं गोविन्दभाई हूँ'। उसका चिन्तन नहीं करना पड़ता। स्वतः पता है।

'स्व' का एक बार पता चल जाता है तो 'स्व' के चिन्तन की आवश्यकता नहीं रहती।

इसी प्रकार जब 'स्व' यानी आत्मा का, अपने असली स्वरूप का पता चल जाता है ठीक से, फिर उसका चिन्तन नहीं करना पड़ता क्योंकि 'स्व' को आवरण करनेवाला परचिन्तन छूट गया। अब 'स्व' स्वतः निरा-

वरण प्रकट है ।

दिले तस्वीरे है यार,
जब भी गरदन झुका ली,
मुलाकात कर ली ।
बन्दगी का था कसूर
बन्दा मुझे बना दिया ।
मैं खुद से था बेखबर
तभी तो सिर झुका दिया ॥

इतना आत्मलाभ हो जाता है कि उसका बयान नहीं हो सकता । **'सः तरति ।'** वह तर जाता है । **'लोकान् तारयति ।'** और लोगों को भी तारता है । **'सः तृप्तो भवति ।'** वह तृप्त होता है । **'सः अमृतो भवति ।'** वह अमृत स्वरूप हो जाता है ।

'पर' के चिन्तन से बचने मात्र से 'स्व' में प्रीति होने लगती है । और 'स्व' में प्रीति हुई तो 'स्व' का ऐसा मधुर रस मिलता है कि महाराज ! उसका क्या बयान करें ! पर का ऐसा रस कदापि नहीं हो सकता । 'पर' में रस वास्तव में है ही नहीं । जब-जब रस आता है तब होता है 'स्व' का और लगता है पर का ।

'रसगुल्ले खाये । आहा...! बड़ा मजा आया !' मजा वस्तु में होता तो दुकानदार बेचता क्यों ? मजा तुम्हारी जिह्वा के द्वारा, तुम्हारे मन के द्वारा तुम्हारा 'स्व' का ही है ।

एक ही वस्तु एक को मजा देती है, दूसरे को ग्लानि देती है । मलिन, दुष्ट आहार करनेवाला आदमी मांस, मुर्गी, अण्डा, शराब आदि अपवित्र पदार्थ देखकर खुश होता है लेकिन किसी साधक के सामने ये चीजें रख दी जाय तो उसे लगेगा कि मेरे कौन-से पापों का उदय हुआ कि ये चीजें सामने आयी ? संतों के हाथ का दो दाना प्रसाद पाकर साधक प्रसन्न हो जायगा जबकि अभिमानी अहंकारी को इतना मजा नहीं आयेगा ।

तात्पर्य यह है कि तुम्हारा 'स्व' जिसको अच्छा मानता है वहाँसे सुख मिलता है क्योंकि तुम अपना सुख उसमें आरोपित करते हो । अपना प्रेम उसमें डालते हो । प्रसाद में अपनी श्रद्धा का प्रेम डालते हो तो प्रसाद तुम्हें आनन्द देता है । गन्दी चीजों में तुम अगर अपना प्रेम डालते हो तो गन्दी चीजें भी उस समय सुखद लगती हैं, बाद में चाहे वे घोर हानिकर्त्ता क्यों न हो !

...तो सुखद तुम्हारा आत्मा है । उस आत्मलाभ को प्राप्त करने के लिये आत्मज्ञानी महापुरुषों के पास राजा - महाराजा - सम्राट अपना राजपाट - साम्राज्य छोड़कर जाते थे ।

आत्मलाभ को प्राप्त करने के लिये आत्मज्ञानी महापुरुषों के पास राजा-महाराजा अपना राजपाट छोड़कर जाते थे ।

आत्मचर्चा करने से परचर्चा छूट जाती है । आत्मरस लेने से पररस की आसक्ति छूट जाती है ।

एकान्त में बैठकर कभी-कभी अपने स्वभाव को बदलने के लिए संकल्प करना चाहिए । सोचना चाहिए कि, 'यह मिल गया फिर क्या ? वह मिल गया लेकिन आखिर क्या ? पर में आसक्ति और सुख के लिए पर की गुलामी कब तक ? पराधीनता कब तक ? मृत्यु आ जाय... लोग अर्थी में बाँधकर स्मशान में पहुँचा दें उसके पहले अपने मन को परमात्मा में पहुँचा दूँ तो कितना अच्छा होगा ? बुढ़ापे में आँखें पा लूँ तो कितना अच्छा होगा ?'

अगर चीजों में आनन्द होता तो चीजें बेचनेवाला चीजें बेचकर आनन्दित न होता, चीजें रखकर आनन्दित होता । मगर वह चीजें बेचकर आनन्दित होता है और लेनेवाला चीजें खरीदकर आनन्दित होता है ।

चीजों में आनन्द होता तो चीजें बेचनेवाला चीजें बेचकर नहीं, चीजें रखकर आनन्दित होता ।

बेचनेवाले को इच्छा थी कि 'बिक जाय... बिक जाय... ।' चीजें बिकी, उसकी इच्छा शांत हुई तब उसे सुख हुआ । लेनेवाले को इच्छा थी कि 'माल चाहिये ।' माल खरीद लिया, इच्छा शांत हुई तो मन की एकाग्रता की घड़ी आ गई और मन में 'स्व' का आनन्द टपका । लगता

है कि वस्तु बिकी तब आनन्द आया, वस्तु खरीदी तब आनन्द आया। वास्तव में इच्छा छूटी, मन शांत हुआ, उतनी देर एकाग्र हुआ तो मन में रस-स्वरूप, सुख-स्वरूप, आनन्द-स्वरूप आत्मा की आभा प्रकट हुई।

वस्तुओं में न सुख है न दुःख है। वे तो परप्रकाश्य हैं। उनको तो पता भी नहीं कि मैं रसगुल्ला हूँ। जो जड़ वस्तु है, परप्रकाश्य है वह सुख-दुःख कैसे दे सकती है ? सुख-दुःख हमारे भाव में है। वस्तुओं में सुख-दुःख हमारे थोपे हुए हैं। हम इतने स्वतंत्र हैं कि वस्तु पर चाहे सुख थोप दें चाहे दुःख थोप दें... मरजी अपनी। थोपे हुए सुख और दुःख को जानकर अपने आप में आ जायें, 'स्व' में, साक्षी स्वरूप में जग जायें... मरजी अपनी।

चीजों को अपने आपका पता नहीं चलेगा लेकिन हमको तो अपने आपका पता चलेगा। हम परचर्चा में, परचिन्तन में पर के मूल्य में इतने बह गये कि स्व-चर्चा का पता नहीं रहा, 'स्व' का रस ही नहीं आया। फिर भी जो जो रस आ रहा है पर में से, वह रस पर का नहीं है, है तो 'स्व' का ही लेकिन भ्रांति से दिखता है पर में।

जैसे बच्चा आयने में अपने को देख रहा है, अपने ही प्रतिबिम्ब को पकड़ने के लिए छटपटा रहा है लेकिन हाथ में नहीं आता। वह समझता है कि आयने के भीतर कोई है। बाहर बच्चा है तभी भीतर दिखता है। ऐसे ही आप जैसा सोचते हो, जैसा करते हो वैसा ही संसार रूपी आयने में भासता है।

अंधेरी रात में रास्ते के किनारे कटा हुआ पेड़ का ठूंठा खड़ा है। सज्जन आदमी उसको देखकर भावना करता है कि ये कोई साधु-महात्मा, संतपुरुष होंगे। दूसरे संसारी आदमी ने सोचा कि अकाल का समय चल रहा है, यह कोई चोर-डाकू होगा। चोरी-डकैती करने निकला होगा।

है तो पेड़ का ठूंठा। उसको अंधेरे में देखकर एक ने अपने चित्त में चैन पैदा किया दूसरे ने बेचैनी। चैन और बेचैन चित्त की वृत्तियाँ हैं, धाराएँ हैं। उन धाराओं से ऊपर उठकर अपने ज्ञान का उपयोग करो, ठीक से देखो तो ठूंठे की वास्तविकता का पता चल जायेगा।

ऐसे ही जगत रूपी ठूंठे में हम सुख और दुःख, सज्जन और दुर्जन थोप देते हैं। जगत में न सुख है न दुःख है। जगत को तो पता ही नहीं कि मैं जगत हूँ। जगत को देखनेवाले को जब सुख का भाव आता है तब सुख होता है, जब दुःख का भाव आता है तब दुःख होता है। जब 'स्व' का भाव आता है तब सुख दुःख दोनों छोटे हो जाते हैं।

कोई धन का सहारा लेकर सुखी होना चाहता है, कोई सत्ता का, कोई पत्नी का सहारा लेकर सुखी होना चाहता है, कोई पति का, कोई मित्र का सहारा लेकर सुखी होना चाहता है, कोई किसीका... लेकिन कोई पूर्ण सुखी नहीं मिलेगा।

जब तक रामकृष्णदेव को तोतापुरी महाराज ने 'स्व' का भाव नहीं दिखाया था तब तक रामकृष्णदेव ने विभिन्न भावनाओं से काली की आराधना की, हनुमानजी की उपासना की, सखी संप्रदाय में सखी बन गये और मासिक धर्म भी आने लगा। लेकिन ये सब अवस्थाएँ थी, 'स्व' का भाव नहीं था। जब तोतापुरी सद्गुरु मिले तो 'स्व' के भाव में ठहरा दिया। नरसिंह मेहता ने भी ठीक ही कहा है :

ज्यां लगी आतमा तत्त्व चीन्यों नहीं।
त्यां लगी साधना सर्व झूठी ॥

जिसने आत्मज्ञान को अपना लक्ष्य बना लिया वह पर की चर्चा से अपना समय, शक्ति बचाकर अपने आप में आता है। जो पर की चर्चा से समय बचाता है वह 'स्व' में प्रीतिवाला हो जाता है। जो 'स्व' में केन्द्रित हो जाता है, निःसंकल्पावस्था में आरूढ़ हो जाता है, शांति और भक्ति का साम्राज्य पा लेता है उसके लिए

धंधा-रोजगार तो क्या, तैंतीस करोड़ देवताओं का सुख-वैभव भी छोटा हो जायगा। ऐसा है स्व का खजाना। 'महीने में दस - बीस हजार रूपये कमा लिये...' अरे ! दस-बीस हजार की क्या बात है, सारी पृथ्वी का राज्य भी मिल जाय तो भी छोटा है इतना भव्य खजाना पड़ा है तुम्हारे अपने भीतर में।

जब पाया आतम हीरा।
जग हो गया सवा कसीरा॥

एक बार आत्महीरा मिल गया तो जगत कथीर जैसा हो गया। पर का चिन्तन, पर का आकर्षण मिटते ही स्व का रस आने लगता है। जब तक 'स्व' का रस नहीं आता तब तक स्वभाव सुधरता भी नहीं। स्वभाव बदलता है, सुधरता नहीं। बच्चे का स्वभाव जवानी में बदल जाता है। वास्तव में वह स्वभाव ही नहीं है। जो बदले वह परभाव है, मन का भाव है।

'स्व' का बोध हो जाय, 'स्व' का ज्ञान हो जाय तो आप तृप्त हो जाओगे। 'स्व' का ज्ञान नहीं हुआ तो मन फिर 'स्व' की सत्ता लेकर अपना भाव बना बनाकर स्वभाव बदलता रहता है।

'स्व' नहीं है इसलिए भाव है। तो स्वभाव सात्त्विक होता है, राजस होता है, तामस होता है। सात्त्विक आदमी दुःख में भी सुख बना लेता है। राजस आदमी दुःख से बचता है और सुख को पकड़ता है। तामसी आदमी के लिए दुःख तो दुःख है ही, सुख की चीजों को भी दुःख में बदल देता है। सब अपनी अपनी करनी के मुताबिक 'स्व' से सम्मुख या विमुख हो जाते हैं।

❀

(पेज २५ से चालू...)

लोगों को ऐसे अद्‌भुत अनुभव सुरत के आश्रम में भी होते हैं और इन्दौर एवं राजकोट के आश्रम में भी होते हैं। पूज्य बापू के वैदिक विधि से शक्तिपात और योग सामर्थ्य का प्रसाद अद्‌भुत है, अनुपम है और अलौकिक है। मेरे जैसे तो अनेकानेक लोगों की डूबती नावें इस अलख के औलिया के स्मरण से, चिंतन से, आशीर्वाद से, प्रसाद से तर गयी हैं। धन्य हैं वे लोग, जिन्हें पूज्य बापू का सत्संग सुनने, अनुभव करने और बड़दादा की प्रदक्षिणा करने का सौभाग्य मिला है।

- सवजीभाई ए. गज्जर
२८५,बलिया की खिड़की
बड़ी सालवीवाड़, सरसपुर, अहमदाबाद-३८००१८

❀

सत्गुरु का गैबी चमत्कार

मैं ४५ वर्षीय ग्रामीण ब्राह्मण युवती हूँ। मैंने पू. बापू से मंत्रदीक्षा तो ली नहीं है। लेकिन उन्हें मन से अपना सतगुरु मान चुकी हूँ। मेरे कान चार वर्ष से पक रहे थे। बहुत दवाइयाँ करवाई लेकिन कोई फर्क नहीं पड़ा। मैंने अपने पड़ोसी के घर में पू. बापू की एक पुस्तक देखी। उसमें किसी भाई का अनुभव लिखा गया था। वह भी कान के बारे में ही था। मैंने वहीं पर मनोमन मनौती मान ली कि अगर मेरा कान बिना दवाई के अच्छा हो गया तो प्रसाद चढ़ाऊँगी और बड़दादा को १०८ प्रदक्षिणा करूँगी। उसके बाद सप्ताहभर में ही मेरा कान एकदम ठीक हो गया। उससे आवाज निकलती थी वह बन्द हो गयी, पाक निकलना भी बन्द हो गया। पू. बापू की महिमा का कहाँ तक बखान करूँ ? छोटे मोटे कई चमत्कार होते रहते हैं। अभी मुझे दीक्षा तो मिली भी नहीं है फिर भी पू. बापू की कृपा बरस रही है। पू. बापू के चरणकमलों में ध्यान रखने की कोशिश करते हुए पत्र समाप्त करती हूँ।

- प्रार्थी
करुणादेवी चुन्निलाल भट्ट
मु.पो. भासौर, वाया बनकोड़ा,
तहसील सागवाड़ा, जिला डुंगरपुर, राजस्थान।

साधक परिवार को निवेदन है कि पूज्य बापू के कृपाप्रसादरूप आपको प्राप्त जो कुछ अनुभव हों वह हमें कृपया लिख भेजें। यथावकाश मेगेजीन में प्रकाशित किये जाएँगे।

भगवन्नाम-महिमा

भगवान का पावन नाम क्या नहीं कर सकता ? भगवान का मंगलकारी नाम दुःखियों का दुःख मिटा सकता है, रोगियों का रोग मिटा सकता है, पापियों का पाप हर लेता है, अभक्त को भक्त बना सकता है, मुर्दे में प्राणों का संचार कर सकता है । अरे ! इतना ही नहीं, भगवन्नाम के प्रभाव से अजामिल जैसा महापापी, दुराचारी भी भक्त बन जाता है ।

सत्संग सरिता

श्रीमद् भागवत में एक कथा आती है :

अजामिल नाम का एक व्यक्ति पिता की मृत्यु के बाद मनमुख हो गया । धन हो, जवानी हो और मनमुख व्यक्तियों का संग हो, कुसंग हो फिर पतन होने में बाकी बचता ही क्या है ? धन मिलना कोई बड़ी बात नहीं, सत्ता मिलना कोई बड़ी बात नहीं, युवावस्था होना कोई बड़ी बात नहीं, किन्तु सत्संग मिलना बड़ी बात है ।

जहाँ में उसने बड़ी बात कर ली ।
जिसने अपनी आत्मा से मुलाकात कर ली ॥

जब तक आत्मवेत्ता, ब्रह्मज्ञानी संतों की मुलाकात नहीं होती, रामरस का दान करनेवाले दाताओं की मुलाकात नहीं होती तब तक दुनियादार दरिद्र रह जाते हैं ।

कबीरा यह जग निर्धना,
धनवन्ता नहीं कोई ।
धनवन्ता तेहु जानिये,
जाके राम नाम धन होई ॥

जब तक जीव को असली धन, रामरस का धन नहीं मिलता तब तक धन पाने के लिए, सुख पाने के लिए वह दुनिया के न जाने कौन कौन-से कर्म करता है ! अजामिल भी उसमें से एक था । उसकी संगति दुराचारी लोगों के साथ होने के नाते एवं कुसंस्कार होने के नाते अजामिल का संपर्क एक गणिका के साथ हो गया । वह माँ को दुःख देता था । धीरे धीरे उसने घर का इतना सत्यानाश कर दिया कि माँ तो दुःखी होकर मर गयी ।

माँ की मृत्यु के बाद अजामिल उस गणिका को घर ले आया । फिर जब उसकी धन-संपत्ति खत्म हो गयी तो वह चोरी, डकैती, बदमाशी आदि कुमार्ग से पैसा लाने लगा ।

एक बार कुछ संत जा रहे थे । अजामिल की पत्नी (गणिका) के मन में हुआ कि हमने जीवन में खूब दुष्कृत्य किये हैं । अब कुछ सुकृत करें । संत जा रहे हैं, उनको आमंत्रित कर भोजन करायें । उसने संतों को भोजन कराया । भोजन करके संत उठे इतने में अजामिल आ गया । तब उस महिला ने कहा : ''संतों को प्रणाम करो ।''

अजामिल बोला : ''तू तो भोली है । बाबाओं को खाना खिला दिया ! मैं तो इनका तुम्बा, कमंडल छीन कर बेचकर आऊँ ऐसा आदमी हूँ । यह तू क्या कहती है ?''

पत्नी ने कहा : ''कुछ भी हो, इन संतों को आप प्रणाम करो ।''

महाराज ! आप रवाना हो जाओ । नहीं तो आप मेरे को नहीं जानते । मैं अजामिल हूँ ।

अजामिल जब प्रणाम करता है तब संत बोलते हैं :

''भाई ! अब भोजन तो करा दिया, दक्षिणा चाहिए ।''

जैसे मनीआर्डर करना है १०० रूपयों का, तो सौ रूपये भेजने के लिए तीन रूपये मनीआर्डर चार्ज भी तो चाहिए । इसी प्रकार भोजन कराने के बाद दक्षिणा भी तो देनी चाहिए ।

अजामिल बोला : ''महाराज ! दक्षिणा ये

मेरे दो हाथ हैं । आप रवाना हो जाओ नहीं तो... आप मेरे को नहीं जानते । मैं अजामिल हूँ ।''

संत निर्भीक वाणी में कृपा बरसाते हुए बोले : ''चाहे तू अजामिल हो चाहे कोई और मिल हो लेकिन हम तो दक्षिणा लेकर ही जायेंगे । हमको दक्षिणा में रूपये पैसे नहीं चाहिए । हम दक्षिणा यही चाहते हैं कि तेरे घर जो बालक आनेवाला है उसका नाम नारायण रख देना ।''

एक दिन अजामिल मृत्युशय्या पर पड़ा और वह देखता है कि चहुँ ओर मेरे कुकर्म यमदूतों का रूप धारण कर मुझे लेने आये हैं ।

संतों ने सोचा : ''यह खुद सत्संग में जाये ऐसा आदमी तो नहीं है । किसीको सत्संग में ले जाये ऐसा भी नहीं है और सुबह उठकर ध्यान-भजन करे ऐसा भी नहीं है । यह केस तो बिल्कुल बिगड़ा हुआ है । बिगड़े हुए केस में तो महाराज ! सबसीड़ी की बहुत जरूरत पड़ती है । अत: उसके बेटे का नाम नारायण रखवा देंगे । छोटे बेटे में पिता की प्रीति होती है । जब वह बार-बार छोटे बेटे को बुलायेगा तो इस बहाने भी भगवान नारायण के पावन नाम का उच्चारण करेगा । हे भगवान ! आप उसको कंसेशन दे देना ।''

संतों ने हृदय में संकल्प किया और अजामिल से कहा :

''हमें दूसरी दान-दक्षिणा नहीं चाहिए । दक्षिणा में तू केवल यह वचन दे कि तेरे यहाँ थोड़े ही दिनों के बाद जो बेटा जन्मेगा उसका नाम नारायण रखेगा ।''

अजामिल ने कहा : ''महाराज ! उससे आपको क्या फायदा होगा ?''

संतों ने कहा : ''हमको यह फायदा होगा जो हम चाहते हैं । हम चाहते हैं कि तुम्हारे जैसे एक व्यक्ति का उद्धार हो जाये तो उससे बड़ा फायदा संतों को और क्या चाहिए ?''

अजामिल बोला : ''अच्छा महाराज ! नारायण नाम रख देगें ।''

अजामिल को पता नहीं था कि यह छोटा-सा प्रयोग कितना कल्याण कर सकता है ! समय बीता और अजामिल को पुत्रप्राप्ति हुई । उस पुत्र का नाम उसने नारायण रख दिया ।

जो आदमी पापाचारी होता है उसकी अपमृत्यु होती है । हम हररोज २१६०० श्वास खर्च करते हैं । हमारी आयु वर्षों पर नहीं गिनी जाती, अपितु श्वासोच्छ्वास पर गिनी जाती है । यदि आपकी १४६३२१२३११ श्वास हैं तो आप १४६३२१२३१२ श्वास नहीं ले सकते, अर्थात् एक श्वास भी ज्यादा नहीं ले सकते । समझो आपकी आयु एक करोड़ श्वास है तो आप एक करोड़ और दस श्वास नहीं ले सकते हो । एक करोड़ श्वास खत्म हुए तो आप गये ।

अगर योग करते हैं, श्वासोच्छ्वास कम खर्च करते हैं तो आपकी आयु लंबी हो सकती है और भोग अधिक भोगते हैं, श्वासोच्छ्वास ज्यादा खर्च होता है, तो फिर आयु क्षीण होती है और यही कारण है कि कई योगी बारह सौ, चौदह सौ, दो हजार वर्ष तक भी जीते हैं । कभी कभी संत और योगी लोग सोचते हैं कि भगवत्तत्त्व को जान लिया, अब शरीर को लम्बा रखने की क्या जरूरत है ? तो वे शीघ्र भी चले जाते हैं । चाँगदेव ने योगबल से अपनी श्वासों को रोक दिया था । लेकिन आत्मज्ञान नहीं हुआ तो ज्ञानेश्वर महाराज की शरण में गये । ज्ञानेश्वर महाराज मात्र २२ साल के थे । बाईस साल के गुरु हैं और चौदह सौ साल का शिष्य है । तो इस देश ने धन को, पद को, आयु को इतना महत्त्व नहीं दिया जितना कि आत्मा-परमात्मा की मुलाकात को । जो आत्मा-परमात्मा का साक्षात्कार कर लेता है वह स्वयं परमात्म-स्वरूप हो जाता है ।

अजामिल को पता नहीं था कि यह छोटासा प्रयोग कितना कल्याण कर सकता है !

ऐसे भगवद्स्वरूप संतों ने अजामिल के घर

भोजन किया और दक्षिणा के रूप में उसके बेटे का नाम नारायण रखवाया । अजामिल अपने उस नारायण नाम के पुत्र के स्नेहपाश में बँधता गया ।

एक दिन अजामिल मृत्युशय्या पर पड़ा और वह देखता है कि चहुँ ओर मेरे कुकर्म यमदूतों का रूप धारण कर मुझे लेने आये हैं । वह बहुत घबराया और अपने प्यारे पुत्र नारायण का नाम लिया : ''नारायण ! मुझे बचा... नारायण ! मुझे बचा...'' ऐसा करते करते नारायण नाम उसके हृदय से निकला तो भगवान नारायण के पार्षद आ गये और यमदूतों से बोले : ''तुम दूर हटो ।''

यमदूत बोले : ''यह महापापी है, दुराचारी है ।''

पार्षद बोले : ''यह पापी हो या दुराचारी हो, लेकिन भगवान का नाम तो लेता है ।''

यमदूत बोले : ''यह भगवान नारायण का नहीं अपने बेटे नारायण का नाम ले रहा है ।''

पार्षद बोले : ''भले ही यह बेटे का नाम ले रहा है, किन्तु बेटे का नाम भी तो संतों ने रखवाया है । संतों का यह संकल्प है कि बेटे का नाम, भगवान के नाम में गिना जाये । तुम दूर हटो ।''

पार्षदों का अपना आग्रह और यमदूतों का अपना आग्रह अजामिल को दिख रहा है । आखिर पार्षदों की बात युक्तियुक्त थी । यमदूत चले गये । दुराचार के कारण अजामिल की अपमृत्यु होने वाली थी वह टल गई । बारह वर्ष की आयु उसको फिर से मिली । तब से अजामिल भगवान का बड़ा भक्त हो गया ।

नारायण नाम की महिमा बहुत लोगों ने गायी है । काशी में प्रसिद्ध महामना मदनमोहन मालवीयजी के नाम का कॉलेज है, सत्संग खंड है, सदाव्रत है, सभाखंड़ है । ऐसे मदनमोहन मालवीयजी भी कुछ काम करते थे तो नारायण नारायण करके काम करते थे और सफल होते थे । हनुमानप्रसाद पोद्दार भी नारायण नाम का जप करके फिर कुछ काम करते थे तो सफल हो जाते थे ।

आप भी जब किसी काम का आरंभ करो तब नारायण नाम का चार बार उच्चारण करके आरंभ करो । आप जब खेत में अनाज बोने जाओ तो अनाज पर नजर डाल दो और कह दो 'नारायण... नारायण... नारायण... नारायण...।' बाद में अनाज की बुआई करो । वह अनाज नहीं होगा, प्रसाद हो जायेगा । आपके घर का तो बेड़ा पार हो ही जायेगा, जिनके हाथ में वह अन्न आयेगा उसको भी लाभ होगा ।

नारायण...नारायण...नारायण...नारायण...

गुरुओं की गत न्यारी...

कहीं पर किसी एक संत की पधरावनी थी । आसपास के लोगों को भी घरवालों ने बुलाया था । उसमें से एक पड़ोसी का लड़का भी था जो, अभी अभी I.A.S. की परीक्षा देकर आया था । उस लड़के को गर्व था कि 'मैं कुछ जानता हूँ । उसने बाबाजी से पूछा : ''बाबाजी ! कुछ बताइये ।''

बाबाजी ने कहा : ''बेटा ! प्यार से 'राम राम' जपा करो ।''

लड़का बोला : ''यह तो हम जानते हैं । हमारे जैसे पढ़े-लिखे लोगों के लिए कुछ और बताइये महाराज !''

बाबाजी दिखावटी गुस्से में बोले : ''तेरे जैसे गधे क्या जानते हैं ?''

उस लड़के का गर्व तो चूर चूर हो गया । अब दूसरों की तो हिम्मत नहीं हुई कि कुछ पूछें । थोड़ी देर बाद बाबाजी ने कहा : ''क्यों चुपचाप बैठे हो ? मौनी बाबा हो क्या ? कुछ पूछो तो हरिचर्चा हो जाये ।''

तब एक सज्जन ने कहा : ''बाबाजी ! यह लड़का कलेक्टर होनेवाला है । हमने इसे बुलाया था, आपके दर्शनों के लिए । उसने आपसे पूछा और आपने बोल दिया कि 'तेरे जैसा गधा क्या जानता है ?' यह सुनकर हम सब चुप हो गये ।''

महाराज अनजान-से होकर बोले : ''भाई ! मैंने तो कुछ नहीं किया ।''

तब वह लड़का बोला : ''महाराज ! आपने अभी तो मुझे गधा कहा ।''

बाबाजी ने कहा : ''अरे ! तू 'गधा' शब्द को जितना जानता है उतना क्या राम-नाम को जानता है ? 'गधा' शब्द को सुनने से तेरा रोम रोम आगबबूला हो गया । वैसे ही 'राम राम' सुनने से तेरा रोम रोम पुलकित हो जाना चाहिए था पागल !

तू बोलता है कि 'मैं रामनाम जानता हूँ ।' कहाँ जानता है ? मैं तो तुझे अनुभव करा रहा था भैया ! बाकी मैं तुझे गधा क्यों कहूँ ? और तू यह भी समझ ले कि गधे में भी तेरी ही आत्मा है, तू चिंता क्यों करता है ?''

महापुरुष लोग, संत लोग हमें समझाने के लिए क्या क्या युक्तियाँ अपनाते हैं ! उन्हें समझ पाना हमारी सीमित बुद्धि से बाहर की बात है । हमारे अहंकार को मिटाने के लिए, हमें जन्म-मरण के पाश से छुड़ाने के लिए वे क्या अटकलें लगाते हैं ! तभी तो कबीरजी कहते हैं :

सत्गुरु मेरा शूरमा, करे शब्द की चोट ।
मारे गोला प्रेम का, हरे भरम की कोट ॥

❀

रामनाम की औषधि...

काश्मीर में एक सम्मेलन हुआ था । उसमें भाषण करने वाले लोगों का बहुत बोलबाला था । भाषण करने वाले 'लोग' होते हैं और सत्संग करने वाले 'संत' होते हैं । जीभ तो वही की वही होती है । जब बुद्धि से, किताबों से और समाज के इधर-उधर के मतों से प्रभावित होकर बात आती है तो वह भाषण हो जाता है । नेता बोलता है तो भाषण होता है, प्रोफेसर बोलता है तो व्याख्यान होता है, लेकिन संत बोलते हैं तो सत्संग हो जाता है ।

मीरा ने टूटी-फूटी भाषा में पद गाये थे उससे बहुत सुन्दर सुहावने ढंग से लता मंगेशकर गाती होगी । उसके साज और कंठ मीरा से मधुर तो हो सकते हैं, लता के गाने से लोगों को मनोरंजन मिलता है किन्तु मन की शांति नहीं मिलती । मीरा उससे भले कम सुरीले कंठ वाली होगी, शायद उसके पास साज भी न थे तो भी मीरा के श्रीमुख से जिन्होंने सुना होगा उनके मन को अवश्य शांति मिली होगी ।

प्रोफेसर भले ही सुन्दर ढंग से बोले, किन्तु उसके वचन व्याख्यान हो जाते हैं । जबकि कबीरजी भले ही टूटा-फूटा बोलें, फिर भी कबीरजी के वचन सत्संग बन जाते हैं ।

उस सम्मेलन में एक भाषणकर्त्ता ने कहा :

''जब तक दिल पवित्र नहीं हुआ तब तक 'राम राम' करने से क्या फायदा ? पहले अपने दिल को पावन करो, मन को पवित्र करो फिर राम राम कहो ।'' इस प्रकार का भाषण देकर वह बैठ गया ।

फिर किसी संत की बारी आई । संत बोले :

''अभी अभी ये सज्जन भाषण करके चले गये, वे बोलते थे कि जब तक मन पवित्र नहीं हुआ तब तक 'राम राम' करने से क्या फायदा ? पहले मन को पवित्र करो फिर 'राम राम' करो । तो मैं पूछता हूँ कि मन कौन-से सोड़ाखार से पवित्र होगा कि लाइफबॉय साबुन से पवित्र होगा ? किसी लॉन्ड्री से या किसी धोबी की दुकान से मन पवित्र होगा ? या कि डंडा मारने से मन पवित्र होगा ?

अरे भाई ! मन पवित्र है तो भी राम राम जपो और मन पवित्र नहीं है तब भी 'राम राम' जपो । जैसे जिह्वा में सूखा रोग हो जाता है तो मिश्री फीकी लगती है लेकिन उसको मिटाने का उपाय भी यही है कि मिश्री चूसते जाओ तो जिह्वा का सूखा रोग मिट जायेगा और मिश्री की मिठास भी आने लगेगी । दोनों काम हो जायेंगे । ऐसे ही हृदय सूखा है तो भी 'राम राम' लो जिससे सूखापन मिटते ही 'राम राम' के रस का अनुभव हो जायेगा । फिर तो रामरस से इतने रसमय हो जाओगे कि बस ! बाहर के विषय-विकारों का रस फीका लगने लगेगा ।''

> सुषुप्ति आपके हाथ पैर कसके बाँधकर हररोज पाठ सीखाती है कि देश, काल, वस्तु सत्य नहीं है, केवल देखने भर को है । डरो नहीं ।

अद्भुत है पू. बापू की लीला ! बड़दादा के पानी से कैन्सर गायब...

मेरी पत्नी मंजुला को पिछले दिसम्बर माह में पता चला कि उसे कैन्सर की बीमारी हो गयी है । पहले दवाइयाँ शुरू की । किन्तु पन्द्रह दिन तक कुछ भी फर्क न पड़ने के कारण उसे सरसपुर में शारदाबहन अस्पताल में भर्ती किया । वहाँ दस दिन तक इस बीमारी की चिकित्सा की गई और दस सेंक दिये गये । परंतु वहाँ भी कुछ फर्क न पड़ने के कारण अस्पताल के अधिकारियों ने इस केस को न्यू सिविल हॉस्पिटल में ट्रान्सफर कर दिया ।

मेरी पत्नी का दर्द दिनोंदिन बढ़ता जा रहा था । बीमारी पूरे शरीर में फैल गयी थी । डॉक्टरों के कहे अनुसार बीमारी तीन ग्रेड के ऊपर पहुँच गयी थी । पच्चीस जितने सेंक देने के बावजूद उसकी बीमारी में कोई फर्क न पड़ा । शरीर पूर्ण रूप से खत्म जैसा हो गया था । सिविल हॉस्पिटल के डॉक्टरों ने कह दिया कि मुश्किल से तीन दिन जी सकेगी । हम सब अत्यंत चिंतातुर हो गये ।

तभी अचानक हमारे एक निकट के संबंधी मिलने आये । उन्होंने हमें परम पूज्य बापू के विषय में जानकारी दी और कहा कि सच्चे हृदय से श्रद्धापूर्वक प्रार्थना करने से आराम होगा । उन्होंने यह भी कहा कि : ''मोटेरा में स्थित आश्रम में एक बड़दादा है । वहाँ पाँच प्रदक्षिणा करके संकल्प करके बड़दादा के पास पानी की बॉटल रखना और दो-तीन दिन बाद वह पानी लाकर, जब बीमार को पानी पीना हो तब 'हरि ॐ' कहकर पानी पिलाना ।''

जिस दिन पानी पिलाया उसी दिन पू. बापू के वड़दादा का मानो चमत्कार हुआ ।

उनके कहे अनुसार ही मैंने आश्रम में जाकर किया । जिस दिन पानी पिलाया उसी दिन पू. बापू के बड़दादा का मानो चमत्कार हुआ । जिस समय पानी पिलाया उसी समय, जो दो महीने से भी अधिक समय से बिल्कुल खाना नहीं खा सकती थी उसने तुरंत ही खाने की माँग की । फिर तो मुझे अटूट श्रद्धा हो गयी । हर तीन दिन मैं आश्रम में जाकर पानी की बॉटल रख आता और वहाँ रखी हुई बॉटल ले आता । फिर तो मेरी पत्नी को बहुत फायदा होने लगा । मानो अब शरीर में कैन्सर का नामोनिशान तक न रहा । जो पहले पलंग पर से बिल्कुल उठ नहीं सकती थी, बिल्कुल खा-पी नहीं सकती थी वह अब स्वयं चल-फिर सकती है, घर के काम कर सकती है । इतना ही नहीं, पिछले तीन महीनों से प्रत्येक रविवार को सुबह से पूरा दिन आश्रम में ही व्यतीत करती है । बड़दादा की प्रदक्षिणा करके, कैसेट सुनकर शाम को घर आती है । अभी गुरुपूनम के समय, आश्रम में चार दिन, रात-दिन सेवा में ही रही थी । उसके बावजूद उसके शरीर पर थकान, रात्रिजागरण या अन्य कोई असर नहीं हुआ ।

परम पूज्य बापू का ऐसा चमत्कार देखकर डॉक्टर भी आश्चर्यचकित हो गये । मेरी पत्नी को तो एक नया जीवन मिला है । पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू के बड़दादा के आशीर्वाद से अब वह काफी ठीक हो गयी है । मेरे प्यारे गुरुदेव को मैं, मेरी पत्नी और घर के सभी लोग कोटि-कोटि वंदन करते हैं ।

(अनु. पेज २० पर...)

दिनांक ६ अक्तूबर को पू. बापू भटासी, वांकानेर आदि गाँवों में हजारों भक्तों को सत्संग का लाभ देकर चार्टर्ड प्लेन से इन्दौर पधारे। दिनांक ७ को लोहामंडी, तौलकांटा के पास, फलोदी स्टेशन के पास गुरुकृपा शॉपिंग कॉम्प्लेक्स का भव्य उद्घाटन किया। कॉम्प्लेक्स की छत पर भव्य मंडप बाँधा गया था। नीचे के आम रास्ते पर भी मंडप बाँधा गया था। २० क्लोज सर्किट टी.वी. रखे गये थे। पूरा रास्ता भाविक जनता से भर गया था। इन अलख के औलिया की अमृतवाणी को सुनने के लिए इन्दौर के कोने कोने से लोग उमड़ पड़े थे।

दिनांक ८ से ११ तक चार दिन के लिए देवास (म.प्र.) में सत्संग समारोह हुआ। प्रतिदिन श्रद्धालुओं की संख्या बढ़ती जाये और मंडप बढ़ाना पड़े, अंत में वह भी छोटा पड़ जाये ऐसी स्थिति तो यहाँ भी बन गयी थी। जिलाधीश, राज्यमंत्री, सांसदों, विधायकों वगैरह सब पू. बापू के सत्संग में आकर धन्य होते, प्रेरणा पाते और निष्पक्ष जीवन जीने का पाठ सीखते। सभी को पू. बापू के पास से ज्ञान, भक्ति, योग, शील, सदाचार सीखने को मिलता। विद्यार्थियों के लिए यहाँ भी विशेष सत्संग समारोह दिनांक ११ को हुआ। पूर्णाहुति का दृश्य...और भावविभोर भक्तों की करुण पुकार..., आँसू बहाते हुए हृदय... अद्भुत था वह भावदर्शन !

प्राणीमात्र के परम हितैषी, आत्मिक प्रेम के महासागर पूज्यपाद बापू शाम को सत्संग समारोह की पूर्णाहुति करके भोपाल आश्रम के लिए रवाना हुए।

दिनांक १४ से १७ तक चार दिनों के लिए पूज्यश्री गुरुदेव के सान्निध्य में भोपाल आश्रम में वेदांत शक्तिपात साधना शिविर का आयोजन हुआ। पूज्यश्री गुरुदेव का आत्म-साक्षात्कार दिन दिनांक १७ को अत्यंत धूमधाम से मनाया गया। म. प्र. शासन के भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री सुन्दरलाल पटवा, मंत्री श्री लक्ष्मीनारायण शर्मा, बाबुलाल गौर एवं अन्य सांसदों विधायकों ने पुष्पहार द्वारा पू. श्री बापू का स्वागत किया और पू. बापू का दर्शन एवं सत्संग पाकर धन्यता का अनुभव किया। राज्यपाल श्री मोतीलाल वोरा ने पू. बापू को लाख लाख प्रणाम एवं भोपाल आश्रम में उत्सव मनाने हेतु शुभ-कामनाएँ भेजीं।

उसके पश्चात् राह देखते छिंदवाड़ा के साधकों का भाग्योदय हुआ। दिनांक २१ से २५ अक्तूबर तक पू. श्री बापू का छिंदवाड़ा में सत्संग समारोह हुआ। आर्थिक रूप से पिछड़े क्षेत्र, किन्तु हृदय से श्रीमंत ऐसे प्रभुप्रेमी पू. बापू की सत्संग-सरिता में, संत-स्नेह में पावन हुए। धन्य है उनकी श्रद्धा-भक्ति को।

जबलपुर में सिंधी भाइयों ने तमाम वर्ग के समाज का स्नेह साथ लेकर जबलपुर में भी ऐतिहासिक कार्यक्रम करके अपनी अनोखी, अमिट छाप रखी।

अखबारों की खबरें

'कलकत्ता समाचार' एवं 'हलचल'

दिनांक : २३-७-९३

बिहार में पलामु-डाल्टनगंज जिले में पू. आसारामजी बापू के उपक्रम में नि:शुल्क खिचड़ी वितरण योजना

सर्वविदित है कि बिहार के पलामु-डाल्टनगंज जिले भयंकर अकाल से पीड़ित हैं। परिस्थिति अत्यंत दयनीय है। इस परिस्थिति को लक्ष्य में लेते हुए साबरमती, अहमदाबाद आश्रम के पू. संत श्री आसारामजी बापू ने जिले के कई गाँवों में नि:शुल्क खिचड़ी वितरण का आयोजन किया है। दिनांक : २४-४-९३ से प्रारंभित इस खिचड़ी वितरण आयोजन का लाभ आज तक २५००० से भी अधिक जनता ने लिया है। इस कार्य में चास के श्री वल्लभभाई डी. पटेल अच्छा सहयोग दे रहे हैं। जानकारी के लिए सम्पर्क : श्री वी. डी. पटेल, C/o. गुजरात होटल, बायपास रोड़, चास, बिहार।

रांची एक्स्प्रेस

आलस्य एवं व्यसन दूर करने की कोशिश हो

सन् १९६७ में पलामु-गढवा में अकाल पड़ा था। उस समय गुजरात के परम पूज्य संत स्वर्गीय रणछोड़

दास जी रंका में चार महीने रहे । उनके साथ गुजरात से पचास परिवार के लोग अपना काम धंधा बंद करके सेवाकार्य में लगे रहे । इस वर्ष भी अकाल का समाचार सुनकर उनका एक दल राजकोट से आया है और बरवाडीह क्षेत्र में पन्द्रह हजार कुटुम्ब को नि:शुल्क चावल बाँट रहा है ।

यहाँ की जनता की भयंकर स्थिति सुनकर दूसरे संत श्री आसारामजी बापू (साबरमती, गुजरात) का हृदय द्रवित हो गया और उन्होंने आदेश दिया कि सतबरवा में खिचड़ी केन्द्र खोला जाए । इस आदेश को मानकर मैंने (गुजरात होटल, रांची), पलामु-गढवा के गाँवों का दौरा किया तथा वहाँ सतबरवा केन्द्र में ग्रामीणों के लिए खिचड़ी का प्रबंध किया गया । दूरदराज में साईकिल एवं घोड़ों के द्वारा खिचड़ी बाँट रहे हैं । संत श्री आसारामजी बापू की इच्छा है कि इस क्षेत्र के लोगों में से आलस्य और व्यसन छुड़ाने की कोशिश की जाए एवं इन्हें भगवत् मार्ग में लाया जाए जिससे इनके दैनिक जीवन में सुधार हो । यहाँ की जनता चाहती है कि इस भूमि पर साधु संतों का आगमन हो तथा प्रवचन हो जिससे यहाँ के लोगों में जन चेतना जगे एवं लोगों का उत्थान हो ।

- वी. डी. पटेल, गुजरात होटल, रांची ।
दिनांक : १४-८-९३

पू. बापू के आगामी सत्संग-कार्यक्रम

(१) अहमदाबाद में गीता-भागवत सत्संग समारोह

दिनांक : १९ से २४ नवम्बर १९९३
समय : सुबह ९-३० से ११-३०,
दोपहर ३-३० से ५-३०.
स्थान : आनन्दधाम, मानव मंदिर के सामने, ड्राइवइन रोड़, अहमदाबाद ।

(२) वापी में गीता-भागवत सत्संग समारोह

दिनांक : १५ से १९ दिसम्बर, १९९३
समय : सुबह ९ से ११, दोपहर ३ से ५.
स्थान : हरि ॐ धाम, नूतननगर, रेलवे क्रॉसिंग के पास, वलसाड रोड़, वापी (पूर्व).

❀ ''बाहर का ऐश्वर्य मिले चाहे न मिले, ऐसी भी कठिनाई हो कि चाण्डाल के घर की भिक्षा ठीकरे में खाकर जीना पड़े फिर भी जहाँ आत्मज्ञान मिलता हो उसी देश में रहना चाहिए । उसी वातावरण में अपने चित्त को परमात्मा में लगाना चाहिए। आत्मज्ञान में तत्पर मनुष्य ही अपने आपका मित्र है । जो अपना उद्धार करने के मार्ग पर नहीं चलता वह मनुष्य शरीर में पशु माना गया है ।''

- वशिष्ठजी महाराज

❀ ''जो गुरुवचन पर लग जाते हैं वे हजार विघ्न-बाधाएँ आने पर भी आध्यात्मिक मार्ग नहीं छोड़ते और सबसे ऊँचे पद का साक्षात्कार कर ही लेते हैं । ऐसे आत्मवेत्ता अद्भुत होते हैं ।''

❀ ''जब भगवान के सिवाय सब बेकार लगे तो समझो कि वह व्यक्ति ज्ञान की पहली भूमिका में पहुँचा है । उसके लिए विघ्न-बाधाएँ साधन बन जाएगी, तपश्चर्या बन जाएगी। विघ्न-बाधाएँ तो साधक के जीवन का संगीत है। विघ्न-बाधाएँ न आयें तो साधक के जीवन का संगीत छिड़ेगा नहीं ।''

❀ ''परमात्मा जब अपने साधक को दिव्य अनुभूति में उडान भरवाना चाहते हैं तब साधक को चारों ओर से विघ्न-बाधाएँ देते हैं ताकि उसका विचारबल, मनोबल, समझशक्ति एवं आत्मशक्ति बढ़ जाय ।''

❀ महात्मा वही है जो चित्त को डावाँडोल कर दें ऐसे प्रसंग आये फिर भी चित्त को वश में रखे, क्रोध और शोक को प्रविष्ट न होने दे ।

❀ प्रसन्न चित्त एवं उद्योगी कार्यकर्त्ता को प्रकृति हर प्रकार सहायता करती है ।

❀ ❀ ❀ ❀

Registered with Registrar of Newspapers for India Under No. 48873/91

देवास (म.प्र.) में दिव्य सत्संग समारोह में उपस्थित भक्त-समुदाय और उनको पूज्य स्वामीजी का उद्बोधन।

न्यूयोर्क में सत्संग समारोह। हरिरस-आनन्द में उल्लसित साधक-समूह।

हरियाणा में संत आसारामजी लाईब्रेरी का शिलान्यास।

हिम्मतनगर (गुजरात) के आश्रम में बड़ बादशाह को प्रदक्षिणा करते हुए भक्तजन।